१ श्रीमद्गोस्वामितुलसीदासकृत
रामायण (सटीक)
पंडित-ज्वालाप्रसादकृतटीका।

लीजिये रामायण सटीकभी लीजिये असल पुस्तक श्रीगुसाईं-जीकी लिपिके अनुसार व सम्पूर्ण क्षेपकों सहित जिसमें शंका समाधान अद्यपर्य्यंत विस्तारपूर्वक लिखें हैं इसके टीकाकी रचना ऐसी उत्तम और अपूर्व मनभावन सुखद [illegible]वन रामयशपावन है कि, पढते २ कदापि तृप्ति नहीं होती तुलसीदासजीका जीवनचरित्र रामवनवास तिथिपत्र माहात्म्यभी सम्मिलितहै कीमत ८ रु० डाकमहसूल २ रु०

२ रामायण बडा।

सहित श्लोकार्थ गू[illegible] छन्दार्थ स्तुत्यर्थ शंकासमाधान और तुलसीदासजीका जीवनचरित, रामवनवासतिथिपत्र, रामाश्वमेध लवकुशकाण्ड, माहात्म्य और बरवारामायणके जिसमें पंचीकरणका बडा नक़शा और ३८०० कठिन २ शब्दोंके अर्थ लिखेहैं अक्षर अत्यंत मोटा ग्लेजकागजका की० ८रु०रफ् कागजका४रु०

३ रामायण मझोला।

ऊपरके सब अलंकारोंसहित इसका सांचा छोटा है अक्षर सामान्यहै कीमत २॥ रु० रफ् १॥। रु.

४ रामायण गुटका।

यहभी पूर्वोक्त सब अलंकारोंसे पूरितहै साधु तथा दे[illegible]टनकरनेवालोंको अत्यंत उपयोगीहै कीमत बहुतही थोडी केवल१रु०है.

शाक्तप्रमोद।

दशमहाविद्याओंका और पञ्चदेवोंका पञ्चांग।

सम्पूर्ण भारतनिवासि द्विजोत्तमोंपर विदित हो कि, यह अलभ्य क्लिष्टतासे प्राप्त परमगुप्त अत्युत्तम नवीन ग्रंथ हमारे यहां छपा है इसमें आदिशक्ति जगन्माताके दशोस्वरूप अर्थात् काली, तारा, त्रिपुरसुंदरी, भुवनेश्वरी, छिन्नमस्ता, त्रिपुरभैरवी, धूमावती, बगलामुखी, मातंगी, कमलात्मिका, तथा पंच देवता दुर्गा, शिव, गणेश, सूर्य, विष्णु, और वेदोक्त, शास्त्रोक्त मंत्रोक्त, तंत्रोक्त, विस्तारपूर्वक लिखीहै जिनके चित्र (तस्वीरें) भी फोटूग्राफानुसार यथावत् खींचीगईहैं इस ग्रंथका मूल्य ५ मुद्रा.

शङ्खस्मृतिः।

सान्वय अत्युत्तम सरल हिंदिभाषाटीकासहित छपकर विक्रयार्थ प्रस्तुतहै ऐसा उत्तम ग्रंथ अद्यावधिपर्य्यंत कहीं नहीं छपाथा भारतवर्षके राजा महाराजा तथा विप्रगण इसीके अनुसार राजनीति और प्रजापालन धर्मशासन करते हैं यहाँतक कि श्रीमन्महाराज अंग्रेज बहादूरभी इसका अवलम्ब लेते हैं यहग्रंथ परमसुंदर मोटे टैप् और जाडे विलायती कागजपर छपाहै की. ३ रु०

श्रीमद्भागवत संस्कृत तथा भाषाटीका सहित।

श्रीवेदव्यासप्रणीत श्रीमद्भागवत अठारहों पुराणोंमेसें श्रीमद्भागवत सबसे कठिनहै और इसका प्रचार भारतखण्डमें सबसे अधिक है यह ग्रंथ क्लिष्टताके कारण सर्व साधारण लोगोंको टीका होनेपरभी अच्छीरीतीसे समझना कठिनथा कोई २ स्थलमें बडे २ पण्डितोंकी बुद्धि चक्करमें उडजातीथी इसलिये विनासंस्कृत पढे सर्व साधारण पण्डित व स्वल्पविद्या जाननेवाले भगवत्भक्तोंके लाभार्थ संस्कृतमूल अतिप्रिय व्रजभाषाटीका सहित जोकि हिन्दी भाषाओंमे शिरोमणि और माननीयहै उसी भाषामें टीका बनवाकर प्रथमावृत्ती छपायाथा ओ श्रीकृष्णचन्द्र आनन्दकंदकी कृपाकटाक्षसें बहुतही जल्दी हाथोंहाथ विकगई अब इस्की द्वितीयावृत्ती प्रथमावृत्तीकी अपेक्षा अच्छीतरह शुद्ध करवाके मोटे अक्षरमें छपायाहै और संबंधित कथाओंके शिवाय उत्तमोत्तम भक्तिज्ञानमार्गी १०० अतीव मनोहरदृष्टांत दिये हैं कि जिनके श्रवणसे श्रोताओंका मन भावनानुसार मग्न होजाता है कागज विलायती बढियां लगायाहै माहात्म्यषष्ठाध्यायी भाषाटीका सहित इस्के साथही है प्रथमावृत्तीमें मूल्य १९ रुपयाथा इस आवृत्तीमें केवल १२ बाराही रुपया रक्खाहै ज्यादा प्रशंसा बाहुल्यमात्रहै (दोहा) एकघडी आधीघडी, ताहूकी पुनिआध॥ नेमसहित जो नितपढे, कटैकोटि अपराध॥ १॥

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास "लक्ष्मीवेंकटेश्वर" छापाखाना कल्याण-मुंबई.

श्रीः।

नाडीदर्पणस्यानुक्रमणिका।

अनुक्रमणिका

यूनानीमतानुसार नाडीपरीक्षा.

इति नाडीदर्पण विषयानुक्रमणिका समाप्ता

पुस्तकमिलनेका ठिकाना—

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास

"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना

कल्याण—मुम्बई.

औषधालय
या
दवाखाना.
रोगी परीक्षा और
रोग चिकित्सा.
औषधी तैयार करते हैं.
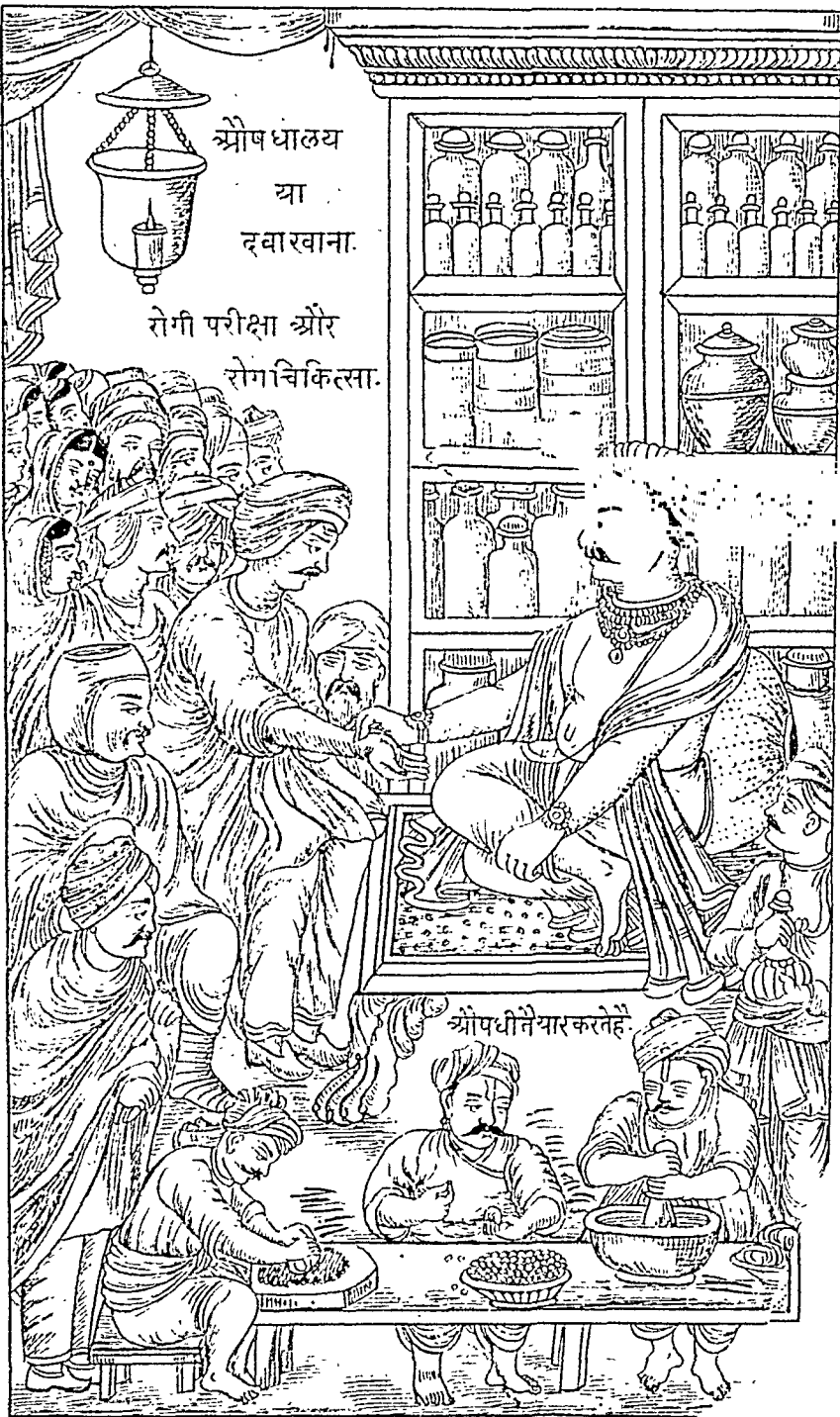
स्फिग्मोग्राफ यंत्रका स्वरूप.
4
5
6
3
नाडीकी अक्स पडनेका स्वरूप.
मूत्र जन्य पदार्थ.
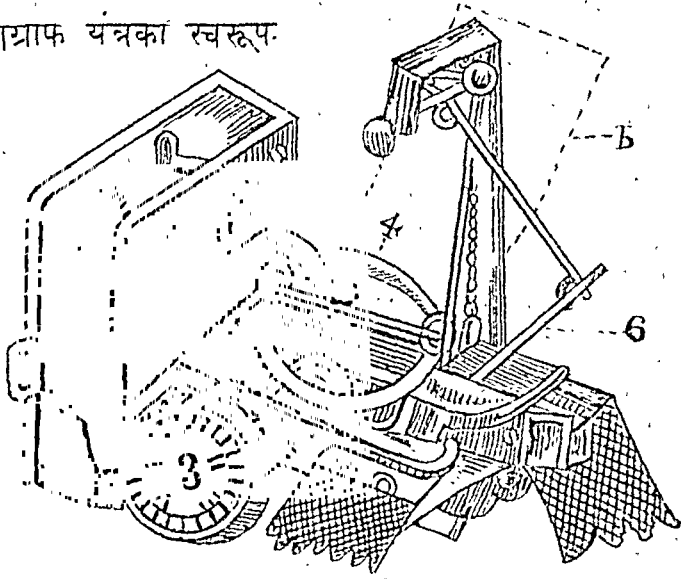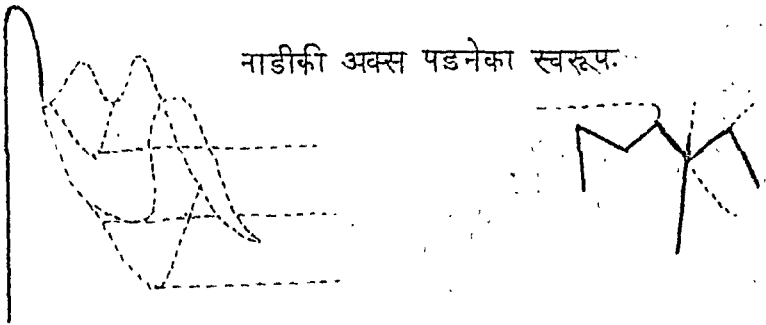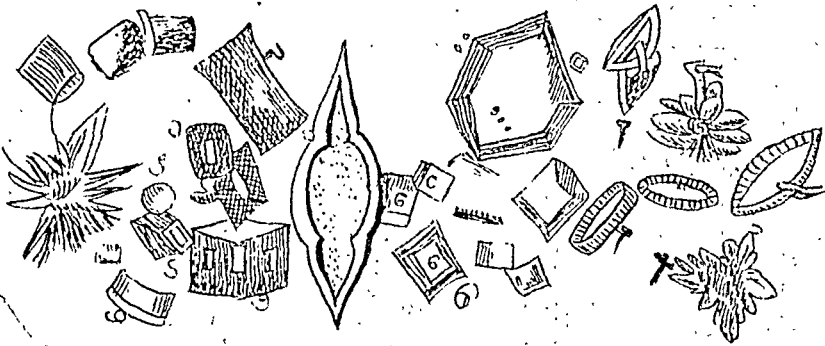
मूत्रजन्य द्वितीय प्रकारके पदार्थ.
खुर्दबीन.
10
9
8
6.
5
12
12
2
मूत्रदर्शक खुर्दबीन
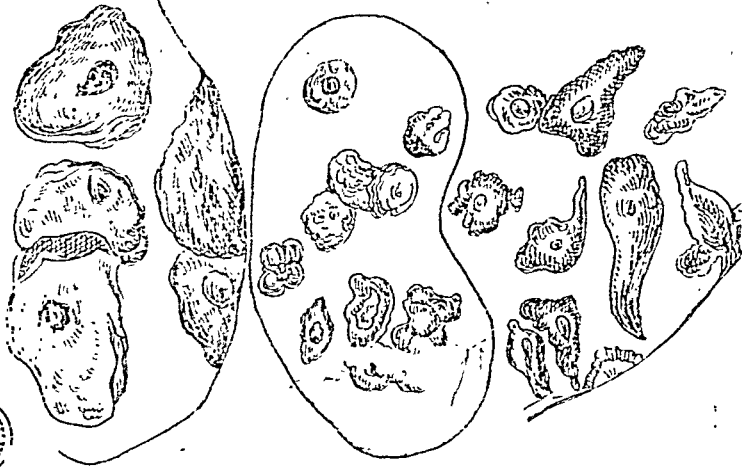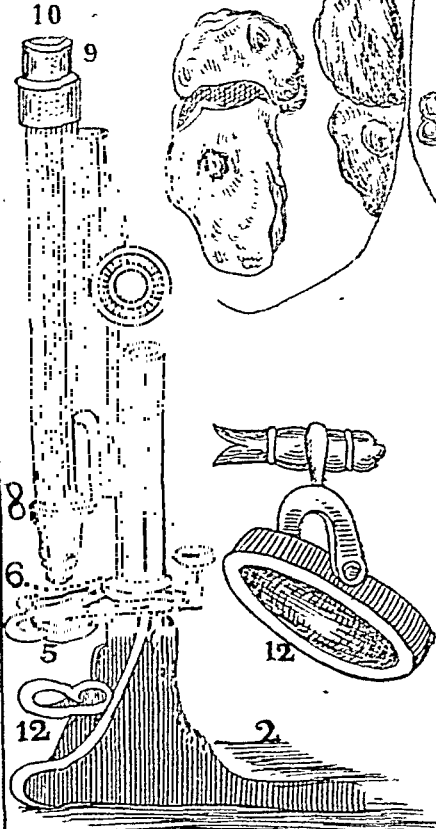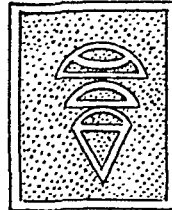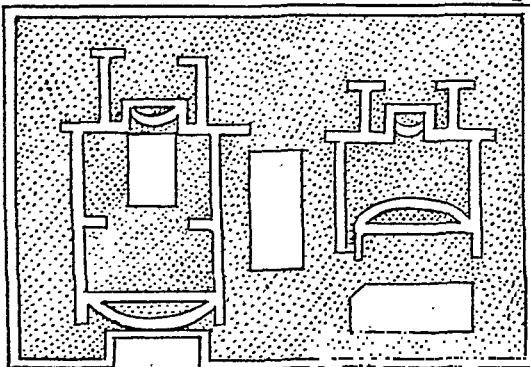
धमनी प्रदर्शक चित्र.

इस धमनी प्रदर्शक चित्रमें ख ग धमनी मूल यह अर्ध्वाभिमुखी, पश्चाद्गामी तथा निम्नमुखी ये तीन अंशोमें विभक्त है.
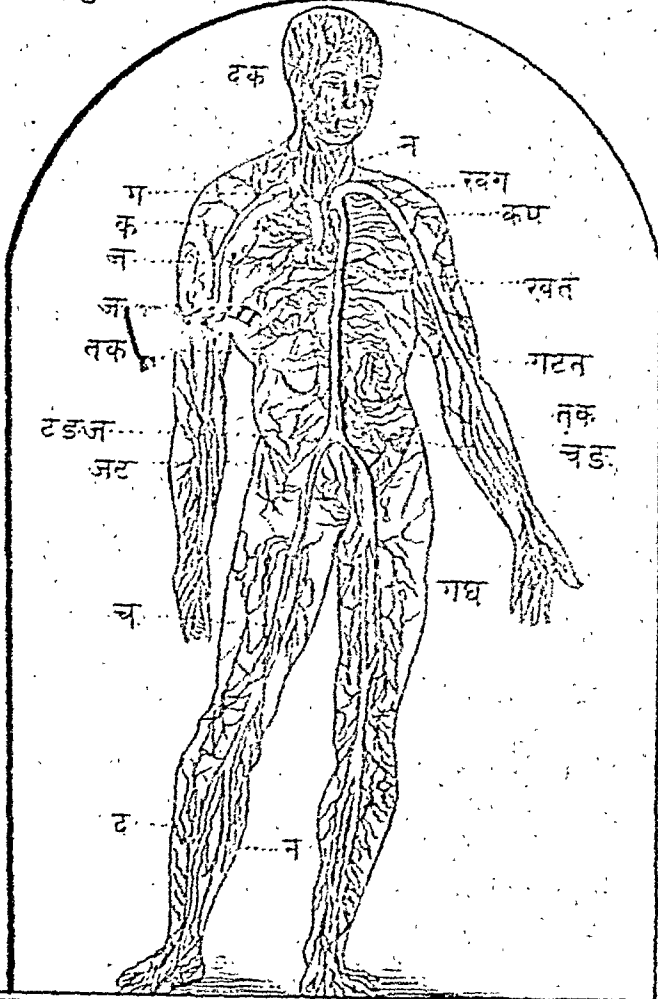
दक	कपालस्थ धमनी.	च	उदरस्थ नाडी.
झन	गलस्थ धमनी.	ट	नलकास्थीय धमनी.
ग	कंठस्थ धमनी.	न	जानुपश्चात् धमनी.
क.	कक्ष नाडी	व	जानुस्थ सन्मुख नाडी.
ज	धमनीस्कंध वा वक्षःस्थ मूल नाडी.	खत	पर्शुकाभ्यंतर धमनी.
तङ.	उदरस्थ मूलनाडी.	हक	प्रगंडीय नाडी.
टङ. ज	आभ्यंतर (भीतरकी) वस्तिनाडी	तक	मणिबंधस्थ नाडी.
जट	बाह्य (बाहरकी) वस्तिनाडी.	गध	प्रकोष्ठीय धमनी.

श्री...न्दे ।

श्रीनिकुञ्जविहारिणे नमः ।

अथ नाडीदर्पणप्रारम्भः ।

मङ्गलाचरणम् ।

श्रीमन्तं जगदीश्वरं गदगदाधारञ्च धन्वन्तारि-
मम्वां श्रीजगदम्बिकाप्रतिकृतिं श्रीकृष्णलालाभिधम् ।
तातं कृष्णपरावतारमहिमं नत्वा मुहुः संयतः
श्रीकृष्णाङ्घ्रिसरोरुहद्वयसुधाधारामिलिन्दायितः ॥ १ ॥
श्रीमन्माथुरमण्डलाभिजननः श्रीदत्तरामाभिधो
दृष्ट्वा तन्त्रसमूहमूहविधयाऽऽलोड्य स्वयं यत्नतः ।
बालानां सुखहेतवे मतिमतामानन्दसंप्राप्तये
नाडीदर्पणनामधेयकमिमं ग्रन्थं करोम्यादरात् ॥२॥ युग्मम् ।

अर्थ–श्रीमान् जगदीश्वर रोग और आरोग्यके आधार ऐसे श्रीधन्वंतरि भगवान् तथा जगन्माता (लक्ष्मी) के तुल्य रमा नामक अपनी माताको तथा कृष्णका परावतार ऐसे श्रीकृष्णलाल (कन्हैयालाल) नामक अपने पिताको वारंवार यत्नपूर्वक नमस्कारकर श्रीकृष्णचरणकमलयुगलामृतधाराको पानकरता भ्रमर और श्रीमधुपुरीमंडल अथवा माथुरद्विज (चौंवे) नकी मंडल कहिये समूह तामें निवास जाकों, अथवा जन्म जाको ऐसा जो दत्तराम संज्ञक में सो अनेक शास्त्रसमूहको देख और स्वयंविधिपूर्वक ५... मथनकर बालकोंके सुखकेलिये और पंडितोंके आनन्दकी प्राप्तीकेअर्थ इस नाडीदर्पण नामक ग्रंथको परमआदरसें करताहूं । यहग्रंथ यथानाम तथा गुणोंमेंभी है अर्थात् जैसें दर्पणसें इसप्राणीके संपूर्ण गुणदोष प्रकटहोतेहै उसीप्रकार इसग्रंथसें नाडियोंके संपूर्ण गुणदोष उत्तम रीतिसें प्रगटहोतेहै ॥ १ ॥ २ ॥

वाग्भटः। ऊर्ध्वाभिमुखी, पश्चाद्

रोगमादौ परीक्षेत तदनन्तरमौषधम् ॥
ततः कर्म भिषक् पश्चाज्ज्ञानपूर्वं समाच

अर्थ—वाग्भट ग्रंथमें लिखाहै वैद्यको उचितहै कि प्रथम
रोगजाननेके अनंतर औषधकी परीक्षा करे रोग और औ
पश्चात् ज्ञानपूर्वक अर्थात् सावधानीकेसाथ चिकित्साकरे यानी औषध

लक्षयित्वा देशकालौ ज्ञात्वा रोगबलाबलम् ॥
चिकित्सामारभेद्वैद्यो यशः कीर्तिमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥

अर्थ—देश और कालका लक्ष करके और रोगको बली और निर्बलित्व
जो वैद्य चिकित्साका प्रारंभ करताहै वह यश, और कीर्तिको पाताहै ॥ ४ ॥

रुग्णावस्थां ततो नाडीं भेषजं पथ्यमेव च ॥
देशं कालञ्च पात्रञ्च यो जानाति स वैद्यराट् ॥ ५ ॥

अर्थ—जो रोगीकी अवस्था, नाडी, औषध, पथ्य, देश, काल, और पात्रको
जानताहै। उसको वैद्यराज कहतेहैं ॥ ५ ॥

रोगोंके आठस्थान।

रोगाक्रान्तशरीरस्य स्थानान्यष्टौ परीक्षयेत् ॥
नाडीं मूत्रं मलं जिह्वां शब्दस्पर्शदृगाकृतिम् ॥ ६ ॥

अर्थ—वैद्य रोगी मनुष्यके आठ स्थानोंकी परीक्षाकरे, जैसे कि नाडीपरीक्षा,
मूत्रपरीक्षा, मलपरीक्षा, जिह्वापरीक्षा, शब्दपरीक्षा, स्पर्शपरीक्षा, नेत्रपरीक्षा और
रोगीकी आकृतिकी परीक्षा ॥ ६ ॥

नानाशास्त्रविहीनानां वैद्यानामल्पमेधसाम् ॥
नाड्याद्यष्टपरीक्षाञ्च सुखार्थं प्रभवन्ति हि ॥ ७ ॥

अर्थ—अनेक शास्त्र पढनेकरके रहित अल्प बुद्धि वैद्योंके लिये यह नाडी आदि
अष्टविधपरीक्षा सुखके अर्थ होवेगी ॥ ७ ॥

आद्यं तावन्नाडिकाविज्ञानादेव वातपित्तकफजनितानामा-
तङ्कानां साध्यासाध्यकष्टसाध्यसभेदकविज्ञानं सुकरत्वेन
भिषग्भिरवाप्यतेऽत एव तावन्निरूप्यते ॥ ८ ॥

अर्थ–तहां प्रथम वैद्योंको नाडीके देखनेसेंही वात, पित्त, और कफजनित रोगोंका साध्यासाध्य और कष्टसाध्य सभेदविज्ञान सहजमें प्राप्त होसक्ताहै; अतएव प्रथम उसी नाडीपरीक्षाका वर्णन करतेहै। प्रथम नाडीदेखनेकी आवश्यकता दिखाते है ॥ ८ ॥

नाडीज्ञानकी आवश्यकता।

नाडीज्ञानं विना वैद्यो न लोके पूज्यतां व्रजेत् ॥
अतश्चातिप्रयत्नेन शिक्षयेद्बुद्धिमान्नरः ॥ ९ ॥

अर्थ–नाडीज्ञानके विना वैद्य संसारमें पूज्य (माननीय) नहीं होता अतएव बुद्धिमान् मनुष्यको उचितहै कि नाडीज्ञानको सद्गुरुसें अति यत्नपूर्वक सीखे अर्थात् नाडी देखनेका अनुभव करे ॥ ९ ॥

बोधहीनं यथा शास्त्रं भोजनं लवणं विना ॥
पतिहीना यथा नारी तथा नाडीं विना भिषक् ॥ १० ॥

अर्थ–जैसें बोधविना शास्त्रपढनकी शोभा नहीं, विना लवण भोजनके पदार्थ प्रियनहीं, और पतिके विना स्त्रीकी शोभा नहीं, उसीप्रकार नाडी ज्ञानके विना वैद्यकी शोभा नहींहै ॥ १० ॥

नाडीजिह्वार्त्तवादीनां लक्षणं यो न विन्दति ॥
मारयत्याशु वै जन्तून्स वैद्यो न च शोभनः ॥ ११ ॥

अर्थ–जो नाडीपरीक्षा, जिव्हापरीक्षा, और स्त्रीके आर्त्तवकी परीक्षा नहीं जाने वह मूढवैद्य तत्काल रोगीयोंको मारताहै इसीकारण ऐसा मूढवैद्य उत्तम नहींहै ॥ ११ ॥

आदौ सर्वेषु रोगेषु नाडीजिह्वाग्रनेत्रकम् ॥
मूत्रार्त्तवं परीक्षेत पश्चाद्रुग्णं चिकित्सयेत् ॥ १२ ॥

अर्थ–वैद्य प्रथम संपूर्ण रोगोंमें नाडी, जिह्वा, नेत्र, मूत्र, और आर्त्तवकी परीक्षा कर फिर रोगीकी चिकित्सा करे ॥ १२ ॥

नाडीज्ञानं विना यो वै चिकित्सां कुरुते भिषक् ॥
स नैव लभते लक्ष्मीं न च धर्मं न वै यशः ॥ १३ ॥

अर्थ–जो वैद्य विना नाडीपरीक्षाके जाने चिकित्सा करताहै वह धन, धर्म, और यशको नहीं प्राप्तहोता परंच उसको अपयशकी प्राप्ती और मूर्ख कहलाताहै ॥ १३ ॥

नाड्या मूत्रस्य जिह्वायाः कुरु पूर्वं परीक्षणम् ॥
औषधं देहि तज्ज्ञाने वैद्य रुग्णसुखावहम् ॥ १४ ॥

अर्थ–हे वैद्य! प्रथम नाडी, मूत्र, और जिव्हाका परीक्षण कर जब नाडी मूत्र और जिव्हाको परीक्षाद्वारा रोगका निश्चय करलेवे तव रोगीको सुखकारी औपधी दे ॥१४॥

यथा वीणागता तन्त्री सर्वान्रागान्प्रभाषते ॥
तथा हस्तगता नाडी सर्वान्रोगान्प्रकाशते ॥ १५ ॥

अर्थ–जैसैं वीणाका तार संपूर्ण रागोंकी सूचना करताहै, उसी प्रकार हाथकी नाडी सर्वरोगोंको प्रकाशित करतीहै इस श्लोकका तात्पर्य यह है वीणाका तारभी जो वजानेवालेहै उन्हीको उस तारके रागकी प्रतीत होती है उसीप्रकार हाथकी नाडीभी जो नाडीके जानने वाले है उन्हीको रोगप्रकाशित करतीहै जैसे मूर्खके वास्ते तारद्वारा राग नहींमालुमहो उसीप्रकार मूर्खवैद्यको नाडीदेखना निष्प्रयोजनहै ॥ १५ ॥

नाडीलक्षणमज्ञात्वा निदानग्रन्थवाक्यतः ॥
चिकित्सामारभेद्यस्तु स मूढ इति कीर्त्यते ॥ १६ ॥

अर्थ–जो वैद्य नाडीके लक्षण विना जाने केवल निदानग्रंथके वाक्योंसैं रोगपरीक्षा कर चिकित्सा करताहै वह मूढ (मूर्ख) ऐसा कहलाता है ॥ १६ ॥

निदानपञ्चकादीनां लक्षणं वैद्यसत्तमः ॥
नाडींतु संवलीकृत्य चिकित्सामाचरेत्खलु ॥ १७ ॥

अर्थ–इसीकारण उत्तमवैद्य निदान पंचकादिके लक्षण जानके और उनमें नाडीके लक्षणभी मिश्रित (सामिल) करके चिकित्साका प्रारंभ करे ॥ १७ ॥

कियत्स्वपि च चिह्नेषु ज्ञातेष्वपि चिकित्सितम् ॥
निष्फलं जायते तस्मादेतच्छृण्वेकचेतसा ॥ १८ ॥

अर्थ–अव कहते है कि बहुतसे चिन्ह जानने परभी चिकित्सा निष्फल होजाती है अतएव इसनाडीदर्पणग्रंथमें जो कहा जाताहै उसको हेवैद्य! तू एकाग्र चित्तसैं सुन १८

तत्रादौ प्रोच्यते नाडीपरीक्षातिप्रयत्नतः ॥
नानातन्त्रानुसारेण भिषगानन्ददायिनी ॥ १९ ॥

अर्थ–तहां प्रथम अनेक ग्रंथोंके अनुसार वैद्योंको आनंददायिनी यत्नपूर्वक नाडीपरिक्षा कहतेहै ॥ १९ ॥

क्वचिद्ग्रन्थानुसंधानाद्देशकालविभागतः ॥
क्वचित्प्रकरणाच्चापि नाडीज्ञानं भवेदपि ॥ २० ॥

अर्थ—अब नाडीज्ञानकी परिपाटी कहतेहै कि कहींतो नाडीज्ञान ग्रंथ पढनेसैं होताहैं, कहीं देश कालके जाननेसें, और कहीं प्रकरण वशसें नाडीका ज्ञान होता है, तात्पर्य यहहै कि वैद्य केवल ग्रंथकेही भरोसैं न रहै, किंतु कुछ अपनीभी बुद्धिसैं विचारे यह कौन स्थानहै, कौनसा कालहै, और ये रोगी क्या आहार विहार करके आयाहै, इसप्रकार अच्छी रीतिसैं विचारकर नाडीको कहे ॥ २० ॥

सद्गुरोरुपदेशाच्च देवतानां प्रसादतः ॥
नाडीपरिचयः सम्यक् प्रायः पुण्येन जायते ॥ २१ ॥

अर्थ—अब नाडीज्ञानकी उत्कृष्टता दिखातेहै कि सद्गुरु अर्थात् सद्वैद्यके बतानेसैं और देवताओंकी प्रसन्नतासैं तथा पूर्वजन्मके पुण्यकरके नाडीपरिचय होताहै, किंतु अपने आप पढनेसैं और विनादेव कृपाके तथा अधर्मी नास्तिकको नाडी देखनेका ज्ञान नहीं होताहै, अतएव जिसको नाडीज्ञानकी आवश्यकता होवे वो सद्गुरु और देवसेवा तथा धर्ममें तत्पर होय ॥ २१ ॥

नाडीपरिचयो लोके न च कुत्रापि दृश्यते ॥
तेन यत्कथ्यते चात्र तत्समाधेयमुत्तमैः ॥ २२ ॥

अर्थ—नाडीका परिचय अर्थात् नाडीदेखनेका ज्ञान इससंसारमें कहीं नहीं दीखता इसीकारण जो इसग्रंथमें कहाजाताहै वो उत्तमपुरुषोंको अवश्य जानना चाहिये ॥ २२ ॥

परीक्षणीयाः सततं नाडीनां गतयः पृथक् ॥
न चाध्ययनमात्रेण नाडीज्ञानं भवेदिह ॥ २३ ॥

अर्थ—वैद्यको उचितहै कि निरंतर नाडीकी गतिकी परीक्षा कराकरे क्योंकि केवल पढनेहीसैं नाडीका ज्ञान नहीं होता ॥ २३ ॥

न शास्त्रपठनाद्वापि न बहुश्रुतकारणम् ॥
नाडीज्ञाने मनुष्याणामभ्यासः कारणं परम् ॥ २४ ॥

अर्थ—नाडीके ज्ञानमें शास्त्रपठनेसैं अथवा बहुतनाडी संबंधी वार्त्ताओंके सुननेसैं नाडीका ज्ञान नहीं होता, किंतु नाडीज्ञानमें मनुष्योंको केवल अभ्यासही परम कारणहै इस्सें अभ्यासकरे ॥ २४ ॥

नाडीगतिमिमां ज्ञातुं योगाभ्यासवदेकतः ॥
शक्यते नान्यथा वैद्य उपायैः कोटिशैरपि ॥ २५ ॥

अर्थ-वैद्यको इस नाडीकी गती जाननेमें समर्थहोना केवल योगाभ्यासके सदृश नाडीदेखनेके अभ्याससेंही होसकताहै, अन्य करोंडो उपायोंसेंभी नाडी ज्ञान नहीं होता।

जलस्थलनभश्चारिजीवानां गतिभिः सह
गतयो ह्युपमीयन्ते नाडीनां भिन्नलक्षणाः ॥ २६ ॥

अर्थ-जल, स्थल, और आकाशमें विचरनेवाले जीवोंकी गति (चाल) करके भिन्न लक्षणा नाडियोंकी गति अनुमान करीजातीहै, अर्थात् जलचर जीव (जोंक, मेंडक आदि) स्थलचरजीव (सर्प, हंस, मोर आदि) और आकाश चारीजीव (लवा, वटेर, आदि) ए जैसें चलतेहै इनके सदृश नाडी चलती है, इनमें जिस दोषकी जैसी चाल नाडीकी लिखीहै उसको उसी प्रकारकी देखकर वैद्य नाडीको वातपित्तादिककी नाडी बतावे, अन्यथा नाडीका ज्ञानहोना कठिनहै ॥ २६ ॥

कस्य कीदृग्गतिस्तत्र विज्ञातव्या विचक्षणैः ॥
अध्येतव्यं च तच्छास्त्रं सद्गुरोर्ज्ञानशालिनः ॥ २७ ॥

अर्थ-वैद्यहोनेवाले प्राणीको उचितहै कि उत्तम ज्ञानवान् शास्त्रके ज्ञाता गुरूसैं किस जीवकी कैसी गतिहै इसको सीखे और जो इसनाडी विषयके ग्रंथहै उनको पढे, किसी जगे हमने ऐसा लिखा देखाहै कि दशवर्षतो वैद्यकके ग्रंथ पढे, और गुरूके आगे अनुभव (आजमायस) करे, क्योंकि यह विद्या पढनेका समय बहुत उत्तमहै, इस समय ग्रंथहै और रोगीदोनो उपस्थितहै जो ग्रंथमें पढे उसको गुरूके आगे रोगीपर परीक्षा करे, यदि जो बात समझमें न आवे तो उसको उसीसमय गुरूसैं पूछलेय तो संदेह निवृत्त होजावे, फिर दशवर्ष वनमें रहकर वनवासियोंसैं अर्थात् माली, काछी, भील, ग्वारिया, आदिसैं औषधका नाम और उसके गुण तथा परीक्षा सीखे तब इसको वैद्यक करनेका अधिकार होताहै ॥ २७ ॥

कल्याणमपि वारिष्टं स्फुटं नाडी प्रकाशयेत् ॥
रुजां कालिकवैशिष्ट्याद्भवेत्सापि विलक्षणा ॥ २८ ॥

अर्थ-कल्याण (शुभ) और अरिष्ट (अशुभ) इन दोनोंको नाडी प्रत्यक्ष प्रकाशित

करेहै । तथा कालके वैशिष्ट्य करके रोगके समय नाडी विलक्षण होजाती है ॥ २८॥

यल्लक्षणा तु नैरुज्ये नोदितायां तथा रुजि ॥
वयः कालरुजां [१]भेदैर्भिन्नभावं बिभर्ति सा ॥ २९ ॥

अर्थ—जैसी आरोग्य पुरुषकी नाडी होती है ऐसी रोगावस्थामें नहीं रहती इसका यह कारणहै कि अवस्था, काल, और रोगोंके भेदकरके नाडी भिन्न भावकों धारण करती है । अर्थात् विपरीतता ग्रहण करती है ॥ २९ ॥

तदवस्थामतः प्राज्ञः सर्वथा सार्वकालिकीम् ।
ज्ञातुं यतेत मतिमान् लक्षणैः सुसमाहितः ॥ ३० ॥

अर्थ—इसीसें चतुर वैद्यको उचितहै कि उस नाडीके सर्वकालकी सदैव लक्षणोंके जाननेका यत्न सावधानता पूर्वक करता रहै ॥ ३० ॥

नाडीके स्पंदनकाकारण ।

परिव्याप्याखिलं कायं धमन्यो हृदयाश्रयाः । वहन्त्यः शोणितस्रोतः शरीरं पोषयन्ति ताः ॥ ३१ ॥ हृदयाकुञ्चनाद्रक्तं कियदुत्प्लुत्य धामनीम् । तत्सञ्चितं तदुत्थश्च प्रविश्य चापरास्वपि ॥ ३२ ॥ भ्राजित्वा निखिलं देहं ततो विशति फुप्फुसम् । फुप्फुसाद्धृदयं याति क्रियैवं स्यात्पुनः पुनः ॥ ३३ ॥ रुधिरोत्प्लववेगेन धमनी स्पन्दते मुहुः । उत्प्लवप्रकृतेर्भेदाद्भेदः स्यात्स्पन्दनस्य च ॥ ३४ ॥ स्थौल्यादिकं धमन्याश्च तत्प्रकृत्यैव जायते । तत्प्रकारान्समासेन ब्रुवे वत्स ! निशामय ॥ ३५ ॥

अर्थ—अब नाडीके चलनेका कारण कहतेहै कि हृदयके आश्रित धमनी नाडी सं-

---

१ [वयःकाल रुजाभेदैः] इस लिखनेको यह प्रयोजनहै कि जैसी नाडी बाल्यावस्थामें होतीहै ऐसी यौवन अवस्थामें नहीं और जैसी यौवन अवस्थामें होतीहै ऐसी वृद्धावस्थामें नहीं होती इसीप्रकार प्रातःकाल, मध्यान्ह और सायंकालमें पृथक् पृथक् भावसें चलतीहै तथा प्रत्येक रोगोंमें नाडीकी गति विलक्षण होतीहै । अर्थात् जैसी ज्वरवान्की नाडी होतीहै ऐसी अतिसारवान्की नहीं होती और जैसी अतिसारिकी होतीहै ऐसी ग्रहणीरोगवालेकी नहींहोती इत्यादि ।

पूर्णदेहमें व्याप्तहो रुधिरको स्रोतके द्वारा वहन करतीहै । उसी रुधिरके वहनेसें शरीरको पोषण करती है । उन संपूर्ण धमनी नाडियोंका आश्रय हृदयस्थ रक्ताधार यंत्रहै, रक्ताधार यह एक स्थूलमांसनलिका ऊपरकी तरफ कुछ उठीहुईहै । यह नली समुदाय धमनी नाडीका मूलभागहै । इसी स्थानसें धमनी नाडियोंकी अनेक शाखा प्रशाखा निकलीहै ये संपूर्ण देहमें व्याप्तहै । इस समस्त सूक्ष्म नलाकृति मांसनलीका नाम धमनी है धमनी मार्गसें हृदयका संचित रुधिर सकलदेहमें परिभ्रमण करके देहका पोषण करता है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

हृदययंत्र स्वभावसेंही सदैव खुलता मुदता रहताहै, जैसे भिस्तीकी सछिद्र जलपूर्ण मसकको ऊपरसें दाबनेसें उस मुसकके भीतरका जल जैसें छिद्रमें होकर बडेवेगसें निकलताहै, उसीप्रकार हृदयके मुदनेसें हृदयस्थ रुधिरका कितनाही अंश उछलकर तत्संलग्न स्थूल धमनीमें प्रवेश करे है । यह आकुंचन अर्थात् हृदयका मुदना जितनी देरमें होताहै उतने कालमें वहउत्प्लुत रुधिर धमनियोंके द्वारा समस्त देहमें परिभ्रमण करके फुप्फुसमें जायकर प्राप्त होताहै, फुप्फुससें फिर दूसरीवार हृदयमें आताहै, और उसीप्रकार जाता है, जीतेहुए देहमें इसीप्रकार यह क्रिया एक नियमके साथ वारंवार होती रहती है, इस रुधिरके उत्प्लव (उछलने) सें संपूर्ण धमनी स्पन्दन कहिये फडकती हैं । रुधिर हृदयमेंसें वारंवार उछलकर धमनीके छिद्रमें प्रवेश होकर वेगके साथ चलताहै, इसी कारण धमनी नाडीभी वारंवार तडफतीहै । यह रुधिरके उत्प्लव प्रकृति भेदसें धमनीके तडफमें भेद होताहै । [अर्थात् यदि रुधिर मंदवेगसें उछले तो नाडी मंद प्रतीत होतीहै, और रुधिर शीघ्र उछले तो नाडीभी शीघ्र चारिणी होती है] एवं रुधिरके स्वभावानुसार नाडीमें स्थूलता, सूक्ष्मता, और कठिनत्वादि धर्म उत्पन्न होतेहै । अब जो जो अवस्था नाडीसें जैसे जैसे लक्षण होतेहै उन सबको मैं आगे कहताहूं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

नाडीके नाम ।

हिंस्रा स्नायुर्वसा नाडी धमनी धामनी धरा।
तन्तुकी जीवितज्ञा च शिरा पर्यायवाचकाः ॥ ३६ ॥

अर्थ–हिंस्रा, स्नायु, वसा, नाडी, धमनी, धामनी, धरा, तंतुकी, जीवितज्ञा, और शिरा, ये नाडीके पर्यायवाचकशब्द है, अर्थात् ए नाडीके नामांतर है ॥ ३६ ॥

नाडीके भेद ।

तत्र कायनाडी त्रिविधा । एका वायुवहा । अन्या । मूत्रविडस्थिरसवाहिनी । अपरा आहारवाहिनीति ॥ ३७॥

अर्थ-तहां देहकी नाडी तीन प्रकारकी है, एक पवनको वहती है दूसरी मल, मूत्र, हड्डी, और रसको वहती है। तीसरी आहारको वहती है ॥३७॥

कन्दमध्ये स्थिता नाडी सुषुम्नेति प्रकीर्त्तिता।
तिष्ठन्ते परितः सर्वाश्चक्रेस्मिन्नाडिकास्ततः॥ ३८॥

अर्थ-नाभीके मध्यमें सुषुम्ना नाडी स्थितहै, इसी नाभिचक्र और सुषुम्ना नाडीके चारोंतरफ संपूर्ण नाडी स्थितहै ॥३८॥

नाभिमध्ये स्थितानाडी गोपुच्छाकृतिसर्वतः॥
तिष्ठन्ते परितः सर्वास्ताभिर्व्याप्तमिदं वपुः॥ ३९॥

अर्थ-संपूर्ण नाडी नाभिके बीचमें गोपुच्छके सदृश स्थितहो सर्वत्र फेल रही हैं। जिनसैं यह देह व्याप्त होरहाहै जैसें गौकी पूछ ऊपरके भागमें मोटी होती है और नीचेको क्रमसें पतली होतीहै, उसीप्रकार नाडीनको जानना ये सब नाभीसै निकलकर चारोंतरफ फैल गईहै ॥३९॥

सार्द्धास्त्रिकोट्यो नाड्योहि स्थूलाः सूक्ष्माश्च देहिनाम्॥
नाभिकन्दनिबद्धास्तास्तिर्यगूर्ध्वमधःस्थिताः॥ ४०॥

अर्थ-इन मनुष्योंके देहमें छोटी और बडी सब मिलकर ३५०००००० साडेतीन करोड नाडी है, वो सब नाभिसैं बंधीहुई तिरछी, ऊपर, और देहके अधोभागमें स्थितहै ॥ ४० ॥

तिस्रः कोट्योऽर्द्धकोटी च यानि लोमानि मानुषे॥
नाडीमुखानि सर्वाणि घर्मबिन्दून्क्षरन्ति च॥ ४१॥

अर्थ-ऊपरके श्लोकमें जो साडेतीन करोड नाडी कही है, वो मनुष्यके देहमें जितने रोमहे वो सब उन नाडियोंके मुखहै, उनसैं पसीना झडता रहता है॥ ४१ ॥

द्विसप्ततिसहस्रन्तु तासां स्थूलाः प्रकीर्तिताः॥
देहे धमन्यो धन्यास्ताः पञ्चेन्द्रियगुणावहाः॥ ४२॥

अर्थ-उन साडेतीन करोड नाडियोंमें १०७२ एकहजार और बहत्तर स्थूल नाडी है, वो धमनी देहमें पवनको धमाती है। और पंचेन्द्रियोंके गुण (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध) को वहती है॥ ४२॥

तासांच सूक्ष्मसुषिराणि शतानि सप्त
स्वच्छानि यैरसकृदन्नरसं वहद्भिः॥

आप्यायते वपुरिदं हि नृणाममीषा-
मम्भः स्रवद्भिरिव सिन्धुशतैः समुद्रः ॥ ४३ ॥

अर्थ—उन पूर्वोक्त नाडीयोंमें छोटे छिद्रवाली स्वच्छ ७०० सातसौ नाडी है वो सब अन्नरसके वहनेवालीहै, उस रससैं संपूर्ण देहका पोषण होताहै जैसें सैंकडों नदियोंके जलसैं समुद्र तृप्त होताहै ॥ ४३ ॥

आपादतः प्रततगात्रमशेषमेषा-
मामस्तकादपि च नाभिपुरःस्थितेन ॥
एतन्मृदङ्ग इव चर्मचयेन नद्धम्
कायं नृणामिह शिराशतसप्तकेन ॥ ४४ ॥

अर्थ—नाभिस्थानस्थित सातसैं नाडीन्सैं मस्तकसैंले पैरोंतक संपूर्ण देह व्याप्त है जैसैं मृदंगमें सर्वत्र चर्मकी रस्सी खिचीहुई होतीहै, उसीप्रकार मनुष्यकी देह इन सातसौं नाडियोंसें बद्ध होरही है ॥ ४४ ॥

सप्तशतानां मध्ये चतुरधिका विंशतिः स्फुटास्तासाम् ॥
एका[१] परीक्षणीया दक्षिणकरचरणविन्यस्ता ॥ ४५ ॥

अर्थ—पूर्वोक्त सातसैं नाडीयोमें २४ चौवीस नाडी मुख्यहै, उनमेभी पुरुषके दहने हाथ और पैरमें स्थित मुख्य एक नाडीकी परीक्षा करनी चाहिये "चतुरधीका" इसपदके कहनेसें यह प्रयोजनहै कि धमनी नाडी चोवीसहै जैसें लिखाहै ॥ ४५ ॥

तिर्यक्कूर्मो देहिनां नाभिदेशे
वामे वक्रं तस्य पुच्छन्तु याम्ये ॥
ऊर्ध्वे भागे हस्तपादौ च वामौ
तस्याधस्तात्संस्थितौ दक्षिणौ तौ ॥ ४६ ॥
वक्रे नाडी द्वयं तस्य पुच्छे नाडी द्वयन्तथा ॥
पञ्च पञ्च करे पादे वामदक्षिणभागयोः ॥ ४७ ॥

अर्थ—मनुष्योंके नाभिदेशमें तिरछा कूर्म (कछवा) स्थितहै, बांई तरफ उसका मुख है और दहनी तरफ पूंछहै, ऊपरके भागमें बांईतरफ हाथहै, और नीचे दक्षिण

१ शतानि सप्त नाड्यस्तु कथिता याः शरीरिणाम् । संभूयांगुष्ठमूले तु शिरामेकामधिष्ठिता ।

पैरहै उस कच्छपके मुखमें दोनाडी, पूंछमें दो, और हाथ पैरोंमें दहनी और वांई तरफ-पांच पांच नाडी जाननी ॥ ४६ ॥
फिर उसी श्लोककी व्याख्या करतेहैं "तासांमध्ये एकेति" इस पदलिखनेका यह प्रयोजनहै कि यद्यपि हाथ पैरोमें पांच पांच नाडीहै परंतु उनमेंभी पुरुपके दहने हाथ पैरकी एक एक नाडी मुख्यहै और स्त्रीके वाम हाथ पैरकी एक एक नाडी मुख्यहै यह अर्थांशसें जाना जाताहै अतएव वैद्यकों इन्हींकी परीक्षा करनी चाहिये जैसे लिखाहै ७४

वामे भागे स्त्रिया योज्या नाडी पुंसस्तु दक्षिणे ॥
इति प्रोक्तो मया देवि सर्वदेहेषु देहिनाम् ॥ ४८ ॥

अर्थ–स्त्रीके वामभागकी ओर पुरुपके दहने भागकी नाडी देखे हेदेवि ! यह सर्व-देहधारियोंमें देखनेकी विधि मेने कहीहै, परंतु जो नपुंसक है उनमें प्रथम यह परीक्षा-करे कि यह स्त्री पंढ है या पुरुपपंढ पश्चात् स्त्री पंढकी वामहाथकी और पुरुष पंढके दहने हातकी नाडी देखे इनमें समानता सर्वथा नहीं होसकती, और कृत्रिम (बनेहु-ए) हिजडे होतेहै उनकी नाडी यथा प्रकृतिमें स्थित होतीहै और "चरणेति" इस पदके धरनेसें कोई कहताहै कि वाम पैरकी नाडीको दहनी गांठके पिछाडीके पार्श्व-भागमें देखनी और दहने पैरकी नाडी वाई ग्रंथिके पिछाडीके पार्श्वमें देखनी यह श्रेष्ठपुरुषोंकी आज्ञाहै कोई छः स्थानोंकी नाडी देखना लिखताहै यथा ॥ ४८ ॥

अङ्गुष्ठमूले करयोः पादयोर्गुल्फदेशतः ॥
कपालपार्श्वयोः षड्भ्यो नाडीभ्यो व्याधिनिर्णयः ॥ ४९ ॥

अर्थ–हाथोंकी नाडी अंगूठेकी जडमें देखे, और पैरोंकी नाडी टकनाओंके नीचे देखे, मस्तककी नाडी दोनो कनपटीयोंमें देखे, इस प्रकार इन छः स्थानकी नाडी देखनेसें व्याधिका यथार्थ निर्णय होताहै ॥ ४९ ॥

नाभ्योष्ठपाणिपात्कण्ठनासोपान्तेषु याः स्थिता ॥
तासु प्राणस्य सञ्चारं प्रयत्नेन विभावयेत् ॥ ५० ॥

अर्थ–नाभी, होठ पैर, हाथ, कंठ, और नासिकाके समीप भागमें जो नाडी स्थितहै उनमें प्राणोंका संचारको यत्नपूर्वक जाने, अर्थात् इन स्थानोंमें सदैव प्राण पवनका संचार होताहै, इसीसें अत्यंत उपद्रवमें इन स्थानोंकी नाडी देखनी चाहिये ॥ ५० ॥

पाणिपात्कण्ठनासाक्षिकर्णजिह्वान्तमेढ्रगाः ॥
वामदक्षिणतो लक्ष्याः षोडश प्राणबोधकाः ॥ ५१ ॥

अर्थ–हात, पैर कंठ, नासिका, नेत्र, कान, जिव्हाका अंत्यभाग और मेढ्र (योनि लिंग) इनके वामभाग और दक्षिणभागमें नाडी देखनी क्योंकि ए १६ नाडी प्राणबोधकहै ऐसा जानना ॥ ५१ ॥

कण्ठनाडी ।

आगन्तुकं ज्वरं तृष्णामायासं मैथुनं क्रमम् ॥
भयं शोकं च कोपञ्च कण्ठनाडी विनिर्दिशेत् ॥ ५२ ॥

अर्थ–आगंतुकज्वर, तृषा, परिश्रम, मैथुन, ग्लानि, भय, शोक, और कोप इतने रोगोंको कंठनाडी देखकर कहे ॥ ५२ ॥

नासानाडी ।

मरणं जीवनं कामं कण्ठरोगं शिरोरुजाम् ॥
श्रवणानिलजान् रोगान्नासानाडी प्रकाशयेत् ॥ ५३ ॥

अर्थ–मरण, जीवन, कामबाधा, कंठरोग, मस्तकरोग, कानके, और पवनके रोगोंको नासिकाकी नाडी प्रकाशित करती है ॥ ५३ ॥

उक्त नाडियोंका प्रमाण ।

हस्तयोश्च प्रकोष्ठान्ते मणिबन्धेऽङ्गुलिद्वयम् । पादयोर्नाडिकास्थानं गुल्फस्याधोऽङ्गुलिद्वयम् ॥ ५४ ॥ कण्ठमूलेऽङ्गुलिद्वन्द्वं नासायामङ्गुलिद्वयम् । एवमप्यङ्गुलिद्वन्द्वमग्रतः कर्णरन्ध्रयोः ॥ ५५ ॥

अर्थ–अब अन्यनाडी किस किस भागमेंहै और वो कितनी बडी है यह कहते है । तहां दोनो हाथके प्रकोष्ठान्तमें जहां मणिबंध अर्थात् पहुचाहै उसजगे दो अंगुल नाडी देखनेका स्थानहै और पैरोंमें टकनाके नीचे दो अंगुल नाडीका स्थान है तथा कंठकी अर्थात् हसलीमें दो अंगुल एवं नासिकामें दो अंगुल नाडीका स्थानहै । इसीप्र- दोनो कर्णके छिद्रके अग्रभागमें भी दो दो अंगुल नाडीके परीक्षाका स्थानहै । तात्पर्य यहहै कि जब हाथकी नाडी प्रतीत नहोवे तब इन स्थानोकी नाडी देखनी ५५

निस्तुषयव एकस्तत्प्रमाणाङ्गुलं स्यात्
तदुभयमितसद्मन्येव नाडीप्रचारः ॥
न भवति यदि तस्मिन् गेहिनी गेहमध्ये
कथमिह गृहमेधी तत्र जीवस्तदा स्यात् ॥ ५६ ॥

अर्थ—छिलका रहित एक यवके प्रमाण इस जगे अंगुल माना है । ऐसें दो अंगुल प्रमाण स्थानमें नाडी रहती है यदि देहरूप घरमें नाडीरूप स्त्री न होवे तो जीवरूप जो गृहस्थी है सो क्याकरे, अर्थात् यावत्काल देहमें नाडी रहतीहै तबतक जीवहै विना स्त्रीके घरमें रहना निंदितहै "धिग्गृहं गृहिणीं विन" तात्पर्य यहहैकी जीव पुरुष, नाडी स्त्री अन्योन्यएकके विना दूसरा नहीं रहसकता ॥ ५६ ॥

परीक्षणीय ।

वातं पित्तं कफं द्वन्द्वं सन्निपातं तथैव च ।
साध्यासाध्यविवेकश्च सर्वं नाडी प्रकाशयेत् ॥ ५७ ॥

अर्थ—वात पित्त कफ द्वंद्वज दोष और सन्निपात एवं साध्यासाध्य (चकारसैं कष्टसाध्य) इनकी संपूर्ण विवेचनाको नाडी प्रकाशित करती है ॥ ५७ ॥

इति श्रीमाथुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण सङ्कलिते नाडीदर्पणे प्रथमावलोकः ।

नाडीज्ञानसमय ।

प्रातः कृतसमाचारः कृताचारपरिग्रहम् ।
सुखासीनः सुखासीनं परीक्षार्थमुपाचरेत् ॥ १ ॥

अर्थ—अब नाडी देखनेका समय कहते हे कि चिकित्सक प्रातःकालमें प्रातःकृत्य-समाप्तिके अनंतर नाडीपरीक्षार्थ रोगीके समीप प्राप्तहो रोगीके प्रातःकृत्य समाप्तिके पश्चात् उसको सुखपूर्वक बैठाकर इसीप्रकार स्वयं आप सुखपूर्वक बैठकर यथाविधान नाडी परीक्षा करे । इसजगे प्रातःकालका तो उपलक्षण मात्रहै किंतु मध्यान्ह और सायंकालमेंभी नाडीपरीक्षा करे जैसें लिखाहै " मध्यान्हे चोष्णतान्विता " इत्यादि ॥ १ ॥

निषिद्धकाल ।

सद्यःस्नातस्य भुक्तस्य क्षुत्तृष्णातपसेविनः । व्यायामाक्रान्त-

देहस्य सम्यङ् नाडी न बुध्यते ॥ २ ॥ तैलाभ्यक्ते[1] रतेरन्ते भोजनान्ते तथैव च। उद्वेगादिषु नाडी च न सम्यगवबुध्यते॥३॥

अर्थ–तत्काल स्नान करा हो, तत्काल भोजन करा हो, अथवा "सुप्तस्य" अर्थात् निद्रित, क्षुधित, तृषार्त्त, गरमीसें घवडाया हुआ, तथा व्यायामद्वारा थकित देह जिसका ऐसे मनुष्यकी नाडी भलेप्रकार प्रतीत नहीं हो उसीप्रकार जिसने तेल लगाया हो; मैथुनान्तमें भोजनके मध्यमें उद्वेग आदि समयमें नाडीकी यथार्थगति निश्चय नहीं हो अतएव वैद्य इन समयोंमें नाडी परीक्षा न करे किंतु रोगीका चित्त जिससमय स्वस्थहोय तब नाडी देखे परंतु वातमूर्च्छादिक क्षणिक रोगोंमे यह उक्तनियम नहींहै ॥ २ ॥ ३ ॥

नाडीदेखने योग्य वैद्य ।

**स्थिरचित्तः प्रसन्नात्मा मनसा च विशारदः ।
स्पृशेदङ्गुलिभिर्नाडीं जानीयाद्दक्षिणे करे ॥ ४ ॥**

अर्थ–अब नाडी देखने योग्य वैद्य कहते है कि जो स्थिरचित्त और प्रसन्न आत्मा तथा मनकरके चतुर ऐसा वैद्य तीन उंगलीयोंसें दहने हाथकी नाडीका स्पर्श करके उसकी गतीकी परीक्षा करे ॥ ४ ॥

मूढवैद्य ।

**पीतमद्यश्चचलात्मा मलमूत्रादिवेगयुक् ।
नाडीज्ञानेऽसमर्थः स्याल्लोभाक्रान्तश्च कामुकः ॥ ५ ॥**

अर्थ–जिसने मद्य पीरक्खाहो, और चंचलचित्त, मल मूत्र बाधा लग रही हो, लोभी और कामीहो ऐसे वैद्यको नाडी न दिखावे, क्योंकि यह नाडीके जाननेमें असमर्थ है ॥ ५ ॥

नाडी देखने योग्य रोगी ।

**त्यक्तमूत्रपुरीषस्य सुखासीनस्य रोगिणः ।
अन्तर्जानुकरस्यापि नाडी सम्यक् प्रबुद्ध्यते ॥ ६ ॥**

अर्थ–अब नाडी देखनेके योग्य रोगी कहतेहै, कि जो मलमूत्रका परित्याग

---

१ तैलाभ्यंगे च सुप्ते च तथा च भोजनान्तरे । तथा न ज्ञायते नाडी यथा दुर्गतरा नदी इति पाठान्तरम् ।

करचुकाहो, और सुखपूर्वक घोंटुओंके भीतर हाथको करे सावधानीसें बैठाहो, ऐसे रोगीकी नाडीको वैद्य देखे, क्योंकि ऐसे मनुष्यकी नाडी भली रीतिसें जानी जाती है ॥ ६ ॥

नाडीदर्शनमें अयोग्य ।

धूर्त्तमार्गस्थविश्वासरहिताज्ञातगोत्रिणाम् ।
विनाभिशंसनं वैद्यो नाडीद्रष्टा च किल्बिषी ॥ ७ ॥

अर्थ-अब कहते हैं ऐसे मनुष्योंकी नाडी वैद्य न देखे, किं जो धूर्त है तथा मार्गमें चलते चलते दिखाने लगे, और जिनको विश्वास नहींहै तथा जिसकी जात पाँति वैद्य नहीं जाने, और विनकहे अर्थात् जबतक रोगी अथवा उस रोगीके बांधव न कहे तबतक वैद्य नाडी न देखे, यदि उक्तमनुष्योंकी वैद्य नाडी देखे तो पापभागी होताहै ॥ ७ ॥

परीक्षाप्रकार ।

सव्येन रोगधृतिकूर्परभागभाजा-
पीड्याथ दक्षिणकराङ्गुलिकात्रयेण ।
अङ्गुष्ठमूलमधिपश्चिमभागमध्ये
नाडीं प्रभञ्जनगतिं सततं परीक्षेत् ॥ ८ ॥

अर्थ-अब नाडी परीक्षाका प्रकार लिखते हैकी रोगके धारण करने वाली जो पहुचेमें नाडीहै उसको दहने हाथकी तीन उंगली (तर्जनी, मध्यमा और अनामीका) सें दाबकर तथा रोगीके हाथकी कोहनीको दुसरे हाथसें अच्छी रीतिसें पकडकर उसके अंगूठेकी जडके नीचे वातगती नाडीकी वारंवार परीक्षा करे तात्पर्य यह है कि प्रथम दहने हाथसें कोहनीको पकडे फिर वाहेसें हाथको हटाय नाडीको दावे, और वाऐ हाथसें रोगीके हाथको साधकर नाडीकी परीक्षा करे ।

इसजगे " दक्षिणकराङ्गुलिकात्रयेण " यह पद केवल उपलक्षण मात्रको धराहै किंतु नाडी वामहाथसें भी देखे यदि ऐसा न मानोंगे तो फिर अपनी नाडीका देखना किसप्रकारहोगा । और वाजे वैद्य दहने हाथकी नाडी वामहाथसें और वामहाथकी दहनेसें देखतेहै यह ठीकहै ।

कदाचित् कोई शंकाकरे कि एकही हाथकी नाडी देखनेसें रोग जानाजाताहै फिर दोनो हाथकी देखना व्यर्थहै इसलिये कहतेहै कि वहुतसें मनुष्योंके वाम-

वालेही वेष्टवाले होतेहैं, अतएव ऐसे मनुष्योंके वाम अंगकी जबतक नाडी नहीं
देखीजाय तबतक यथार्थ ज्ञान नहीं होता। दूसरे दोषोंके भेदसे नाडीके स्थान दोषों-
में भेद होजाताहै अथवा यह संशयहै इसलिये लोकविरुद्धमतसे देखते हैं ॥ ८ ॥

दूसरा प्रकार ।

ईषद्विनामितकरं विततांगुलीयं
बाहुप्रसाररहितं परिपीडनेन ।
ईषद्विनम्रकृतकूर्परवामभाग-
हस्ते प्रसारितसदङ्गुलिसन्धिके च ॥ ९ ॥
अङ्गुष्ठमूलपरिपश्चिमभागमध्ये
नाडीं प्रभञ्जनगतिं प्रथमं परीक्षेत् ॥ १० ॥

अर्थ-वैद्य रोगीके हाथको किंचिन्मात्र नवायकर और हाथकी अंगुलियोंको
मुक्त कर तथा भुजाको बहुत ऊँची न होनेदे और हाथ पट्टी आदिसे बंधा न हो
क्योंकी पट्टीआदिके बंधनसे नाडीकीगति रुकजातीहै फिर रोगीके कूर्पर (को-
हनीके वामभाग) को पकड अंगुली और उनकी संधिसहित हाथको पसा-
रोगीके अंगूठेके निचलेभागमें प्रथम वातकी परीक्षा करे, कारण यहहै कि आदिमें
वातका स्थानहै अतएव प्रथम वातकी परीक्षा करनी चाहिये ॥ ९ ॥ १० ॥

प्रब्रूयेद्दोषनिजस्वरूपं
व्यस्तं समस्तं युगलीकृतं च
मूकस्य मुग्धस्य विमोहितस्य
दीपप्रभाभा इव जीवनाडी ॥ ११ ॥

अर्थ-यह जीवनाडी गूंगेके मूर्छके और मोहितपुरुषके पृथक्-पृथक् और मि-
तथा द्वंद्व दोषोंका जो निजस्वरूप है उसको दिखातीहै, जैसे दीपक अपने प्रकाशसे
घरमें स्थित पदार्थको दिखाताहै ॥ ११ ॥

स्त्रीणां भिषग्वामहस्ते वामे पादे च यत्नतः । शास्त्रेण संप्रदायेन
तथा स्वानुभवेन च ॥ परीक्षेद्रत्नवच्चासावभ्यासादेव जायते ॥ १२ ॥

अर्थ-वैद्य स्त्रियोंके वामहाथ और वामपैरमें शास्त्रकी संप्रदायसे और अप-
नेअनुभवद्वारा रत्नके समान नाडी परीक्षाकरे, यह परीक्षा केवल अभ्याससाध्य

तात्पर्य यह है कि जैसें जौंहरी रत्नपरीक्षामें अभ्यास करनेसें रत्नकी परीक्षा करताहै उसीप्रकार इस नाडीका देखनाभी रत्नपरीक्षाके समानहै, अतएव इसके देखनेमें वैद्य अभ्यासकरे ॥ १२ ॥

करस्याङ्गुष्ठमूले या धमनी जीवसाक्षिणी।
तच्चेष्टया सुखं दुःखं ज्ञेयं कायस्य पण्डितैः ॥ १३ ॥
प्रभञ्जनगतिर्यत्र इति नाड्यन्तरनिरासः सततम् इति
सुस्थदशायामपि परीक्षणीया ।

अर्थ–तहां नाडीदेखनेका स्थान कहतेहै, जैसेकि हाथके अंगूठेकी जडमें जो जीवसाक्षिणी धमनी नाडी है उसकी चेष्टा करके इसप्राणीके देहका सुख दुःख वैद्यजन जाने, ८ के श्लोकमें "प्रभञ्जनगतिर्यत्र" इस लिखनेसें यह सूचनाकरी कि अंगूठेके संनिकट नाडीको देखनी अन्य नाडियोंको न देखना तथा "सततं" इस पदके धरनेसें यह प्रयोजनहै कि वैद्य रोगावस्थाहीमें नाडी न देखे किंतु स्वस्थ दशामेंभी नाडीकी परीक्षाकरे. कारणकि जिसकी नाडी स्वस्थावस्थामें देखीहै यदि उसके रोग प्रगटहोनेवाला होवेतो उस रोगका निश्चय नाडीद्वारा बहुत सुगमतासें होसकताहै इसीसें लिखाहै यथा ॥ १३ ॥

भाविरोगावबोधाय सुस्थनाडीपरीक्षणम् ॥ १४ ॥

अर्थ-अर्थात् होनहार रोगज्ञानके अर्थ वैद्यको स्वस्थ (रोगरहित) मनुष्यकी नाडीपरीक्षा करनी चाहिये ॥ १४ ॥

स्पर्शनादिभिरभ्यासान्नाडीज्ञो जायते भिषक् । तस्मात्परामृशेन्नाडीं सुस्थानामपि देहिनाम् ॥ १५ ॥ स्पर्शनात्पीडनाद्घाताद्वेदनान्मर्दनादपि । तासु जीवस्य सञ्चारं प्रयत्नेन निरूपयेत् ॥ १६ ॥

अर्थ–ग्रन्थान्तरोंमें लिखाहै कि स्पर्शनादिके अभ्याससें अर्थात् प्रत्येककी नाडी देखनेसें यह वैद्य नाडीका ज्ञाता होताहै अतएव यह वैद्य स्वस्थ मनुष्योंकीभी नाडी देखाकरे उस नाडीके स्पर्शसें, पीडन (दावने) सें, घातसें (उंगलियोंमें लगनेसें

---

१ यद्यस्ति नाडी सर्वत्र शरीरे धातुवाहिनी । तथाप्यङ्गुष्ठमूलस्था करस्था सर्वशोभना ॥१॥ विलसति मणिरन्ध्रे ग्रन्थिरङ्गुरुष्ठमूले तदधरणमिताभि स्त्र्यङ्गुलीभिर्निपीड्य । स्फुरणमसकृदेषा नाडिकायाः परीक्षा पदमनुत्रुटिकाधोऽङ्गुष्ठमूले तथैव ॥ २ ॥

वेदन (तडफ) सें और मर्दनकरना इन कारणोंसें वैद्य उन नाडियोंके जीवसंचारको निरूपण करे ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥

गुरुतोऽत्र प्रयत्नेन वैद्येन शुभमिच्छता ।
ज्येष्ठेनाङ्गुष्ठमूलेन नाडीपुच्छं परीक्षयेत् ॥ १७ ॥

अर्थ–यशेच्छु वैद्य यत्नपूर्वक गुरुसें अर्थात् गुरुद्वारा अंगुठेकी जडमें नाडीपुच्छकी परीक्षाकरे, तात्पर्यार्थ यहहै कि जो वैद्य अपने हितकी चाहना करे वो गुरुद्वारा नाडीपरीक्षा सीखे स्वयंही न देखनेलगे ज्येष्ठ कहनेसें अंगूठेका बृहन्निम्नभाग जानना ॥ १७ ॥

नाडीं वायुप्रवाहेन शास्त्रं दृष्ट्वा च बुद्धिमान् ।
गुरूपदेशं संस्मृत्य परीक्षेत मुहुर्मुहुः ॥ १८ ॥

अर्थ–बुद्धिवान् वैद्य पवनके संचारकरके और शास्त्रके अनुसार तथा गुरूके उपदेशको स्मरणकर बारबार नाडीकी परीक्षा करे ॥ १८ ॥

वारत्रयं परीक्षेत धृत्वा धृत्वा विमुच्य च ।
विमृश्य बहुधा बुद्ध्या रोगव्यक्तिं तु निर्दिशेत् ॥ १९ ॥

अर्थ–बारबार नाडीपर उँगलिरखे और हटायले अर्थात् नाडीको कुछ दबायके ढीली छोडदेवे इसप्रकार करनेसें नाडीकी सबलता और निर्बलता चौडाव लंबाव तथा शीघ्रता और मंदताका ज्ञान होताहै । इस प्रकार तीनवार परीक्षाकर संपूर्ण नाडीकी व्यवस्था अपने मनमें विचारकर फिर रोगव्यक्ति कहे अर्थात् इसरोगीके देहमें अमुक रोगहै ऐसे विना विचारे न कहे ॥ १९ ॥

अङ्गुलित्रितयैः स्पृष्ट्वा क्रमाद्दोषत्रयोद्भवैः ।
मन्दां मध्यगतां तीक्ष्णां त्रिभिर्दोषैस्तु लक्षयेत् ॥ २० ॥

अर्थ–नाडीको तीनउँगलियोंके स्पर्शसें तीनोदोषोंकरकै मन्द, मध्य, और तीक्ष्ण गति जाननी, अर्थात् प्रथम उँगलीमें मध्यस्पर्शहोनेसैं वातकी, और बीचकी उँगलीमें तीक्ष्णस्पर्श होनेसें पित्तकी, और अंतकी उँगली (अनामिका) में मंदस्पर्श होनसै कफकी नाडी जाननी ॥ २० ॥

रोगरहितमनुष्यकीनाडी ।

भूलता भुजगप्राया स्वच्छा स्वास्थ्यमयी शिरा ।
सुखितस्य स्थिरा ज्ञेया तथा बलवती मता ॥ २१ ॥

अर्थ-स्वस्थ अवस्थाकी नाडी केंचुआ और सर्पके समान टेढीगतिसें और पुष्ट तथा जडता रहित होतीहै यह नैरोग्य पुरुषकी नाडीके लक्षणहै तथा सुखी पुरुषकी नाडी स्थिर और बलवान् होतीहै ॥ २१ ॥

नाडीके देवता ।

वातनाडी भवेत् ब्रह्मा पित्तनाडी च शंकरः ।
श्लेष्मनाडी भवेद्विष्णुस्त्रिदेवा नाडीदेवताः ॥ २२ ॥

अर्थ-वातनाडीका ब्रह्मा, पित्तनाडीका शंकर, और कफनाडीका पति विष्णुहै।२२।

नाडीन्के वर्ण ।

वातनाडी भवेन्नीला पित्तनाडी तु पाण्डुरा ।
श्वेता तु कफनाडी स्यादेवं वर्णानि संवदेत् ॥ २३ ॥

अर्थ-वातकी नाडीका वर्ण नीलहै, पित्तकी नाडीका पीला, कफनाडीका श्वेत, इसप्रकार नाडीके वर्ण कहने चाहिये ॥ २३ ॥

नाडीन्का स्पर्श ।

पित्तनाडी भवेदुष्णा कफनाडी तु शीतला ।
वातनाडी भवेन्मध्या एवं स्पर्शविनिर्णयः ॥ २४ ॥

अर्थ-पित्तकी नाडी स्पर्शकरनेसें गरम प्रतीत होतीहै, कफकी नाडी शीतल, और वातकी नाडीका स्पर्श मध्यम होताहै इसप्रकार नाडीका स्पर्श जानना ॥ २४ ॥

कालपरत्व नाडीकी गति ।

प्रातः स्निग्धमयी नाडी मध्याह्ने चोष्णतान्विता ।
सायाह्ने धावमाना च रात्रौ[1] वेगविवर्जिता ॥ २५ ॥

अर्थ-स्वभावसेंही नाडी प्रातःकाल स्निग्ध, मध्यान्हमें उष्ण, और सायंकालमें वेगवती, तथा रात्रिमें वेगवर्जित होतीहै ॥ २५ ॥

अथ वातादिस्वभावक्रम ।

आदौ च वहते वातो मध्ये पित्तं तथैव च ।
अन्ते च वहते श्लेष्मा नाडिकात्रयलक्षणम् ॥ २६ ॥

अर्थ-अब वातादिकका स्वभाव क्रम कहतेहै, जिससमय वैद्य कोहनीको पकडताहैं। उसके द्वितीयक्षणमें प्रथम वातकी नाडी फिर मध्यमें पित्तकी और अंतमें कफकी नाडी

१ चिराद्रोगविवर्जितेति पाठान्तरम् ।

चलतीहै । यह द्वितीयादिक्षणोंमें जाननी कोई कहताहै कि आदिमें वातकी बीचमें पित्तकी और अंतमें कफकी नाडी चलती है यह बात सर्वथा निर्मूलहै क्योंकि स्थान-का नियम किसी जगे नहीं करा, विशेष आगे कहते हैं यथा ॥ २६ ॥

उक्तश्लोकका विरोधीवचन ।

आदौच वहते पित्तं मध्ये श्लेष्मा तथैव च ।
अन्ते प्रभञ्जनो ज्ञेयः सर्वशास्त्रविशारदैः ॥ २७ ॥

अर्थ—आदिमें पित्तकी मध्यमें कफकी और अंत्यमे वातकी नाडी सर्वशास्त्रज्ञाता वैद्योंकरके जाननी ॥ २७ ॥

नाडीचक्रमिदम्

वात	पित्त	कफ	नाडीके नाम
श्याम हरित	पीत लाल नील	सपेद	नाडीके वर्ण
ब्रह्मा	शीव	विष्णु	नाडीके देवता
न गरम न शीतल किंतु मध्यम	गरम	शीतल	नाडीका स्पर्श
विषम	दीर्घ	ह्रस्व	नाडीमाप
गंधहीन	तीव्रगंध	मध्यमगंध	नाडीका गंध
तिर्यग्गमन	ऊर्ध्वगमन	अधोगमन	नाडीका गमन
हलकी	हलकी	भारी	नाडीका गुरुता और लघुता
रात्रिदिवाबली	दिवाबली	रात्रिबली	नाडीके बलवान् होनेका समय

उक्तश्लोकका पुष्टिकर्त्ता दृष्टान्त।

तृणं पुरःसरं कृत्वा यथा वातो वहेद्वली । शेषस्थं च तृणं गृह्य पृथिव्यां वक्रगो यथा ॥ २८ ॥ एवं मध्यगतो वायुः कृत्वा पित्तं पुरस्सरम् । स्वानुगं कफमादाय नाड्यां वहति सर्वदा ॥ २९ ॥

अर्थ–इस वाक्यको दृष्टान्त देकर पुष्ट करतेहै कि जैसे प्रबलवात अर्थात् आंधी तिनकाओंको अगाडी करके और कुछ पिछाडीके तिनकाओंको लेकर आप बीचमें टेढी होकर चलती है । इसीप्रकार मध्यगत वायु पित्तको अगाडीकर और अपने पिछाडी कफको करके बीचमें आप टेढी होकर चलती है ॥ २८ ॥ २९ ॥

अतएव च पित्तस्य ज्ञायते कुटिला गतिः । वक्रा प्रभञ्जनस्यापि प्रोक्ता मन्दा कफस्य च ॥ ३० ॥ पित्ताग्रेऽस्ति गतिः शीघ्रा तृणस्येति विदृश्यताम् । मन्दानुगस्य वक्रा वै मारुतो मध्यगस्य ह ॥ ३१ ॥ तथात्रैव च ज्ञातव्या गतिर्दोषत्रिकोद्भवा । नान्यथा ज्ञायते स्नायुगतिरेतद्विनिश्चितम् ॥ ३२ ॥

अर्थ–इसीसें नाडीमें पित्तकी गति कुटिलहै, और वातकी गति टेढी एवं कफकी मन्दगति प्रतीत होतीहै । पित्तकी शीघ्रगति सो आंधीमें तृणके देखनेसें प्रत्यक्ष होतीहै । और जैसें आंधीमें पिछाडीके तृणकी मंदगति होतीहै उसीप्रकार नाडीमें पिछाडी कफकी मंदगति है । और जैसें आंधीके बीचमें पवनकी गति टेढी तिरछी होती है । उसीप्रकार इसनाडीके बीचमें वातकी गति टेढी तिरछी प्रतीत होती है इस प्रकार ही नाडीकी गति प्रतीत होती है । अन्यप्रकारसें नहीं ॥ ३० ॥

परंतु हमको शंकाहैकि नाडीका और आंधीका क्या संबंधहै, क्योंकि आंधीमें आगे पीछे और बीचमें पवनही कहाती है, परंतु नाडीमे तो न्यारे न्यारे दोषहै, जैसें वात पित्त, तथा कफ, और पवनका एकहीकर्महै परंतु इन तीन्यो दोषोंके कर्म पृथक् पृथक् है इस कारण यह दृष्टान्तही असंभवहै हमारे मनको हरण कर्ता नहींहै ॥ ३१॥३२ ॥

ग्रंथकर्त्ताका मत

इदानीं कथयिष्यामि स्वमतं शास्त्रसंमतम् । मिथ्यारोपित-

वादस्य खण्डनं लोकरञ्जनम् ॥ ३३ ॥ वातमग्रे वदन्त्येके पित्तमग्रे च केचन । हास्यास्पदमिदं सर्वं नतु सत्यं मनागपि ॥ ३४ ॥

अर्थ—अब हम शास्त्रसंमत तथा मनुष्योकी रंजना (प्रसन्नता) को और मिथ्यारोपित वादका खंडनरूप अपने मतको कहतेहै । जैसें कोईतो वातकी, और कोई पित्तकी नाडीको आगे बतलाताहै यह केवल उनके हास्यका स्थानहै किंतु किंचिन्मात्रभी सत्य नहीहै इसप्रकार माननेसैं बडाभारी अनर्थ होताहै जैसें आगे लिखतेहै ॥ ३४ ॥

सति पित्तभवे व्याधौ बुद्ध्यतिक्रमतो यदि । वातकोपवशादेवमादौ ज्ञात्वा धरागतिम् ॥ ३५ ॥ प्रददेद्भेषजं ह्युष्णं तद्दोषविनिवृत्तये । तदा नूनं भवेन्मृत्युः पित्तकोपेन भूयसा ॥ ३६ ॥

अर्थ—कदाचित् किसीरोगीके पित्तकी व्याधिहोवे और वैद्यबुद्धिभ्रमसैं वातकोपकी नाडी अग्रभागमें समझकर उस रोगीको दोष दूर करनेको उस उष्ण (शुंठ्यादि) औषध देय तो कहो एकतो पित्तदोषकी गरमी और दूसरे गरम ही दीनी औषध अब कहो वह रोगी पित्तकी गरमीके मारे मरेगा कि बचेगा? किंतु अवश्यही मरेगा ॥

सति वातभवे व्याधौ बुद्ध्यतिक्रमतो यदि । नाडीगतिं पित्तवशादादौ ज्ञात्वा ततो भिषक् ॥ ३७ ॥ प्रददेद्भेषजं शीतं तद्दोषविनिवृत्तये । तदा नूनं भवेन्मृत्युर्वातकोपेन भूयसा ॥ ३८ ॥

अर्थ—इसीप्रकार रोगीके देहमें वातजन्य रोगहोय और वैद्यबुद्धिके भ्रमसैं पित्तकी नाडी जानकर यदि उसरोगीको पित्तनाशक शीतल उपचार करे तो कहो अत्यंत शरद औषधसें रोगी सरदीके मारे मरेगा या बचेगा? किंतु अवश्यही मरेगा ॥ ३७-३८ ॥

अत्याश्चर्यमिदं लोके वर्त्तते दृश्यतां यथा । वदन्त्येवो(लवा) रात्रि केऽपि रात्रिं दिनं तथा ॥ ३९ ॥ एवं स्वेच्छाभिसमय

न स्वल्पलोभेन मानवाः । रोगिणां सुप्रियान् प्राणान्हरन्ति ज्ञानवर्जिताः ॥ ४० ॥

अर्थ-इस संसारमें अत्यंत आश्चर्यहै देखो कोई दिनको रात्रि और कोई रात्रिको दिन कहताहै । इसप्रकार अपनी अपनी इच्छानुसार वकतेहै और ए मूर्ख वैद्य थोडेसें लोभके कारण रोगियोंके परमप्रिय प्राणोंको हरण करते है । कहो इनसें बढकर कौन पामरहै जो विना विचारे अनर्थ करते है भाई यह वैद्यविद्या खेल नहीं है ॥ ४० ॥

अत एवं मया चित्ते सर्वमानीय तत्त्वतः । कथ्यते नास्ति नास्तीह नाडीस्थानविचारणा ॥ ४१ ॥ किन्तु नाडीगतिः श्रेष्ठा शास्त्रकारैः प्रकीर्तिता । न च तत्रहि सन्देहो लेश मात्रोऽपि विद्यते ॥ ४२ ॥ तत्प्रकारोप्ययं ज्ञेयः सावधानतया किल । यथा सर्पजलौकादिगतिर्वातस्य गद्यते ॥ ४३ ॥ न तत्र कुरुते कोऽपि पित्तश्लेष्मभवं भ्रमम् । कुलिङ्गकाकमण्डूकगतिः पित्तस्य कीर्त्यते ॥ ४४ ॥ न तत्र कोऽपि कुरुते वातश्लेष्मभवं भ्रमम् । कपोतानां मयूराणां हंसकुक्कुटयोरपि ॥ ४५ ॥ या गतिः सा च विज्ञेया कफस्यैव गतिनृभिः । न तत्र कोऽपि कुरुते वातपित्तभवं भ्रमम् ॥ ४६ ॥

अर्थ-इन ऊपरकहेहुए सर्वकारणोंको अपने चित्तमें भलेप्रकार विचारकर हम कहतेहै कि नाडीके जो आद मध्य और अंत्य ये स्थान किसीने कहे हैं सो नहीं हैं नहीं हैं । तो क्याहै? इसलिये कहते है कि नाडीकी जो गति है वो सत्यहै क्योंकि इसमें सर्वग्रंथकर्त्ताओंकी संमतिहै और इसमें लेशमात्रभी संदेह नहीं है, उसप्रकारको तुम सावधानताकरके सुनो, जैसें सर्प और जोककी गत्ति वातकी है इसमें कोई भ्रम नहीं करे कि यह पित्तकी नाडीहै या कफकी उसीप्रकार कुलिंग काक और मंडूककी गति पित्तकी है इसमें वात तथा कफकी नाडीका कोई भ्रम नहीं करता, इसीप्रकार कपोत, मोर, हंस, और कुकुट इनकी जो गतिहै वह कफकी है इसमें कोई यह नहीं [illegible] कि ये गति कफकी नहीं है वातपित्तकी है, इसीसें हमारातो यही सिद्धांतहै कि [illegible] स्थान असत्य और गति सत्यहै ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

वातादिकोंकी क्रमसें गति ।

वाताद्वक्रगता नाडी चपला पित्तवाहिनी ।
स्थिरा श्लेष्मवती ज्ञेया मिश्रिते मिश्रिता भवेत् ॥ ४७ ॥

अर्थ–वात तिरछी वहतीहै, अतएव वातकी नाडी टेढी चलतीहै, अग्नि चंचल हो ऊपरको जातीहै अतएव पित्तकी नाडी ऊपरकी तरफ वहतीहै और चपलहै, जल नीचेको जाताहै. इसीसें प्रवल नहीहै अतएव कफकी नाडीभी स्थिरहै और जो मिश्रित नाडीहै उनकी गतिभी मिलीहुई होतीहै । इस्से यह दिखाया कि द्विदोषजमें दोदोषके चिन्ह होतेहै, त्रिदोषमें तीनो दोषोंके चिन्ह होतेहै, कदाचित् कोई प्रश्नकरेकि एकही नाडी चपल और स्थिर कैसें होसकतीहै ? इस्सें कहतेहै कि समय भेद होनेसें दोनो गति होसक्तीहै ॥ ४७ ॥

वातादीकी विशेषगति ।

सर्पजलौकादिगतिं वदन्ति विबुधाः प्रभञ्जने नाडीम् ।
पित्ते च काकलावकभेकादिगतिं विदुः सुधियः ॥ ४८ ॥
राजहंसमयूराणां पारावतकपोतयोः ।
कुक्कुटादिगतिं धत्ते धमनी कफसंवृता ॥ ४९ ॥

अर्थ–सर्प और जोखकी गति पंडितजन वातकी नाडीकी गति कहते,है अर्थात् जैसें सर्प और जोख टेढे तिरछे होकर चलतेहै उसीप्रकार वादीकी नाडी चलतीहै । आदि शब्दसे विछूकी गतिका ग्रहणहै । उसी प्रकार पित्तमें काक कौआ लावक (लवा) और भेद (मेंडका) की गतिके सदृश नाडी चलतीहै अर्थात् जैसें कौआ, लवा, और मेंडका भुदकते उछलते चलतेहै उसी प्रकार पित्तकी नाडी चलतीहै । आदिशब्दसें कुलिंग और चिडा आदिकी गतिका ग्रहणहै । एवं राजहंस (वतक) मोर, खबुतर, कपोत (पिंडुकिया) और मुरगा इन पक्षियोंकीसी अर्थात् ए पक्षी जैसें मंदमंद गति है इसप्रकार कफकी नाडी चलतीहै । आदिशब्दसें हाथी और उत्तम स्त्रीकी अ ग्रहण है अर्थात् जैसे हाथी और उत्तम स्त्री झूमती हुई मंद मंद चलतीहै नाडी जा कफकी नाडी चलतीहै ॥ ४८ ॥ ४९ ॥
औषधसें रोग.

द्वंद्वजनाडीकी चाल ।

अत्याश्चर्यगतिं नाडीं मुहुर्मेकगतिं तथा । वातपित्तद्वयोद्भूतां प्राहुः विचक्षणाः ॥ ५० ॥ भुजगादिगतिञ्चैव राज-

हंसगतिं धराम् । वातश्लेष्मसमुद्भूतां भाषन्ते तद्विदो जनाः ॥ ५१ ॥ मण्डूकादिगतिं नाडीं मयूरादिगतिं तथा । पित्त-श्लेष्मसमुद्भूतां प्रवदन्ति महाधियः ॥ ५२ ॥

अर्थ—वारवार सर्पगति (टेढी) और वारवार मेंडकाकी गति (उछलती) नाडी चले उसको चतुरवैद्य वातपित्तकी नाडी कहतेहैं । तथा कभी सर्पगति और कभी राजहंसकी गतिसें नाडी चलें उसको पंडितजन वातकफकी नाडी कहतेहैं । एवं कभी मेडक और कभी मोरकी चाल चलें उस नाडीको पित्तकफकी बुद्धिवान् वैद्य कहतेहें ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

प्रकारान्तर ।

वातेऽधिके भवेन्नाडी प्रव्यक्ता तर्जनीतले । पित्ते व्यक्ता मध्यमायां तृतीयाङ्गुलिगा कफे ॥ ५३ ॥ तर्जनीमध्यमामध्ये वातपित्ताधिके स्फुटा । अनामिकायां तर्जन्यां व्यक्ता वातकफे भवेत् ॥ ५४ ॥ मध्यमानामिकामध्ये स्फुटा पित्तकफेऽधिके । अङ्गुलित्रितयेऽपि स्यात्प्रव्यक्ता सान्निपाततः ॥ ५५ ॥

अर्थ—वाताधिक्य नाडी तर्जनीके नीचे चलतीहै । पित्तकी नाडी मध्यमा ऊंगलीके नीचे । और कफकी नाडी तीसरी ऊंगली अर्थात् अनामिकाके नीचे चलती है । वातपित्तकी नाडी तर्जनी और मध्यमाके नीचे चलती हे । वातकफकी नाडी अनामिका और तर्जनीके नीचे चलती है । मध्यमा और अनामिकाके नीचे पित्तकफाधिक नाडी चलतीहै । और तीनों ऊंगलियोंके नीचे सन्निपातकी नाडी गमन करतीहे ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

वक्रमुत्प्लुत्य चलती धमनी वातपित्ततः । वहेद्वक्रश्चमन्दश्च वातश्लेष्माधिकं त्वचः ॥ ५६ ॥ उत्प्लुत्य मन्दं चलति नाडी पित्तकफेऽधिके ।

अर्थ—वातपित्ताधिक्यसें नाडी टेढी और उछलती हुई चलतीहे । वातकफसें टेढी और मन्दगमनकरती है पित्तकफाधिक्यमें नाडी उछलीहुई मंद गमन करती हैं ॥ ५६ ॥

उत्तरोत्तर मंद पडजावे ऐसी नाडीको नाडीके ज्ञाता साध्य नहींकहते, किंतु असाध्य कहतेहै ॥ ६४ ॥

यात्युच्चा च स्थिरात्यन्ता या चेयं मांसवाहिनी ।
या च सूक्ष्मा च वक्रा च तामसाध्यां विदुर्बुधाः ॥ ६५ ॥

अर्थ—जो नाडी अत्यंत ऊंची, अत्यंत स्थिर. और जो मांसवाहिनी कहिये मांसाहारकरनेसैं जैसी चले ऐसी चलने लगे और जो अत्यंत सूक्ष्म, और टेढीही उसको वैद्यजन असाध्य कहतेहै ॥ ६५ ॥

असाध्यनाडीका परिहार ।

भारप्रवाहमूर्च्छा भयशोकप्रमुखकारणान्नाडी ।
संमूर्च्छितापि गाढं पुनरपि सा जीवनं धत्ते ॥ ६६ ॥

अर्थ—अत्यंत वोझाके उठानेसैं, अथवा विषवेग धाराके वहनेसे, रुधिरदेखनेके कारण जो मूर्छित हो गयाहो राक्षसादि दर्शनकरके भयभीततासैं धनपुत्रादि नष्ट होनेके शोकसैं जो नाडी अत्यंत स्पन्दरहितभी होगईहो वो फिरभी साध्यताको प्राप्त होतीहै कोई भावप्रवाह ऐसा पाठमानताहै सो असत्है ॥ ६६ ॥

पतितः सन्धितो भेदी नष्टशुक्रश्च यो नरः ।
शाम्यते विस्मयस्तस्य न किञ्चिन्मृत्युकारणम् ॥ ६७ ॥

अर्थ—जो उच्चस्थानादिसें गिराहो, हड्डी आदिके जोडनेसैं, अतीसार रोग वाला, जिसकैं यक्ष्मा आदि रोगके कारण अथवा रमणकरनेके कारण शुक्रक्षीण होगयाहो, ऐसे मनुष्योंकी यदि नाडी अत्यंत क्षीणभी होगईहो तथापि मृत्युका कारण नहीहै, अर्थात् असाध्यके विस्मयको दूरकरेहै ॥ ६७ ॥

तथा भूताभिषङ्गेऽपि त्रिदोषवदुपस्थिता । समाङ्गा वहते नाडी तथा च न क्रमंगता । अपमृत्युर्न रोगाङ्गा नाडी तत्सन्निपातवत् ६८

अर्थ—एवं भूताभिषंग अर्थात् भूतप्रेतबाधामें यदि नाडी सन्निपातके सदृश चले तथा वह नाडी वात पित्त कफ स्वभावक्रमवालीहो किंतु वे क्रम न होय तौ उस सन्निपातके सदृश नाडीसैंभी मृत्युका भय नहींहै ॥ ६८ ॥

स्वस्थानहीने शोके च हिमाक्रान्ते च निर्गदाः ।
भवन्ति निश्चला नाड्यो न किञ्चित्तत्र दूषणम् ॥ ६९ ॥

अर्थ—उच्चस्थानसैं गिरनेसैं शोक और हिम (बर्फ कोहल आदिकी शरदी)

सें यदि नाडी निश्चल होय फिरभी प्रगट होय इस्से मृत्यु शंकाका भय नहीं है इस श्लोकमें "निर्गदा" जो पदहै सो असंगतहै। क्योंकि निर्गदा नाडीभी निश्चला होतीहै ॥ ६९ ॥

स्तोकं वातकफं जुष्टं पित्तं वहति दारुणम् ।
पित्तस्थानं विजानीयाद्भेषजं तस्य कारयेत् ॥ ७० ॥

अर्थ-किंचिन्मात्र वातकफयुक्त और पित्त जिसमें प्रबल होय तो उस रोगीका यत्न करना चाहिये, वो असाध्य नहीं है ॥ ७० ॥

स्वस्थानच्यवनं यावद्धमन्या नोपजायते ।
तावच्चिकित्सा सत्वेऽपि[1] नासाध्यत्वमिति स्थितिः ॥ ७१ ॥

अर्थ-जबतक नाडी स्वस्थान कहिये अंगुष्ठमूलसें च्युत न होय, तावत्कालतक चिकित्सा करे यह असाध्य नहीं है ॥ ७१ ॥

प्रसङ्गवशकालनिर्णय कहतेहैं

भूलता भुजगाकारा नाडी देहस्य संक्रमात् ।
विशीर्णा क्षीणतां याति मासान्ते मरणं भवेत् ॥७२॥

अर्थ-कभी नाडी केंचुएके सदृश कृश और टेढी चले, कभी सर्पके समान पुष्ट बलयुक्त और तिरछी चले, तथा कभी अलक्ष और अतिकृशतापूर्वक गमनकरे एवं कभी देह सूजन आदिसें स्थूल होजावे और कभी कृशहो जाय तो वह रोगी दूसरे महिनेमें मरे ॥ ७२ ॥

क्षणाद्गच्छति वेगेन शान्ततां लभते क्षणात् ।
सप्ताहान्मरणं तस्य यद्यङ्गं शोथवर्जितः ॥ ७३ ॥

अर्थ-कभी नाडी जल्दी चले कभी चलनेसें रहि जावे और देहमें शोथ होय नहीं, तो उस प्राणीकी सातदिनमें मृत्यु होय ॥ ७३ ॥

निरीक्षा दक्षिणे पादे तदा चैषा विशेषतः ।
मुखे नाडी वहेन्नित्यं ततस्तु दिनतुर्यकम् ॥ ७४ ॥

अर्थ-पुरुषके दहने पैरमें और स्त्रीके वामपैरमें यदि नाडी विशेष संचारकरे तथा आदिमें नित्य नाडी चले तो वहरोगी चारदिन जीवे। आदिशब्दसें इस जगे तर्जनी ऊंगली जाननी ॥ ७४ ॥

---

१ तत्स्थाचिह्नस्य सत्वेपीति पाठान्तरम् ।

हिमवद्विशदा नाडी ज्वरदाहेन तापिनाम् ।
त्रिदोषस्पर्शभजतां तदा मृत्युर्दिनत्रयात् ॥ ७५ ॥

अर्थ–सन्निपात ज्वर दाहसें संतप्त रोगीकी नाडी यदि शीतल और निर्मल होय तो वह रोगी तीन दिनमें मरे ॥ ७५ ॥

गतिन्तु भ्रमरस्येव वहेदेकदिनेन तु ।

अर्थ–जिस प्राणीकी नाडी भ्रमरके सदृश गमन करे अर्थात् जैसें भौंरा कुछ दूर उडकर चला जाताहे और फिर उसीजगे आय जाताहे इसप्रकार नाडी चलनेसें उसकी एकदिनमें मृत्यु होय ॥

कन्देन स्पन्दते नित्यं पुनर्लगति नाड्ग्लौ ॥ ७६ ॥
मरणे डमरूकारा भवेदेकदिने न तु ।

अर्थ–मरणमें नाडी डमरूके आकार होतीहै, वो १ दिनमें मरे ॥ ७६ ॥

दृश्यते चरणे नाडी करे नैवाधि दृश्यते ।
मुखं विकसितं यस्य तं दूरात्परिवर्जयेत् ॥ ७७ ॥

अर्थ–जिसके चरणमें नाडी प्रतीत होय और हाथमें न मालुमहो, तथा जिसका मुख खुलगयाहो उसे वैद्य त्यागदेय ॥ ७७ ॥

वातपित्तकफाश्चापि त्रयो यस्यां समाश्रिताः ।
कृच्छ्रसाध्यामसाध्यां वा प्राहुर्वैद्यविशारदाः ॥ ७८ ॥

अर्थ–जिसकी नाडीमें वातपित्त और कफ ए तीनोंदोष होय उसरोगीको बुद्धिवान् वैद्य कृच्छ्रसाध्य अथवा असाध्य कहतेहै ॥ ७८ ॥

शीघ्रा नाडी मलोपेता शीलता वाथ दृश्यते ।
द्वितीयदिवसे मृत्युर्नाडीविज्ञातृभाषितम् ॥ ७९ ॥

अर्थ–जिस रोगीकी नाडी बहुधा मलदूषित होकर शीघ्र चले, किंवा शीतल प्रतीतहो उस रोगीकी दूसरे दिन मृत्युहोय, इसप्रकार नाडीज्ञान पारंगत वैद्योंने कहाहै ॥ ७९ ॥

मुखे नाडी वहेत्तीव्रा कदाचिच्छीतला वहेत् ।
आयाति पिच्छलस्वेदः सप्तरात्रं न जीवति ॥ ८० ॥

अर्थ–वातनाडी तीव्रगति, तथा कभी मंदवहे तथा अंगमेंसें गाढा पसीना निकले तो वह रोगी सातरात्रि नही वचे ॥ ८० ॥

देहे शैत्यं मुखे श्वासो नाडी तीव्रा विदाहिनी।
मासार्धं जीवितं तस्य नाडीविज्ञातृभाषितम् ॥ ८१ ॥

अर्थ–शरीरमें शीतलता, मुखसें अत्यंत श्वास छोडे, तथा नाडी तीव्रदाहयुक्त चले, उसका अर्धमास आयुष्यहै, ऐसें नाडीज्ञाताओंने कहाहै ॥ ८१ ॥

मुखे नाडी यदा नास्ति मध्ये शैत्यं बहिः क्लमः।
यदा मन्दा वहेन्नाडी त्रिरात्रं नैव जीवति ॥ ८२ ॥

अर्थ–जिस कालमें वातनाडी चले नहीं अंतर्गत शीतहो तथा बाहर ग्लानीहोकर मंदमंद नाडी चले तो वह रोगी तीनरात्रि नहीं जीवे ॥ ८२ ॥

अतिसूक्ष्मातिवेगा च शीतला च भवेद्यदि।
तदा वैद्यो विजानीयात्स रोगी त्वायुषः क्षयी ॥ ८३ ॥

अर्थ–जिसकालमें नाडी अति सूक्ष्म किंवा अतिवेगवान् और शीतल वहे तो रोगी क्षीण आयुहै ऐसें वैद्य जाने ॥ ८३ ॥

विद्युद्वद्रोगिणां नाडी दृश्यते न च दृश्यते।
अकालविद्युत्पातेव स गच्छेद्यमसादनम् ॥ ८४ ॥

अर्थ–जिस रोगीकी नाडी कभी कभी विजलीके समान फडकजावे और फिर अस्त होजावे, वो रोगी अकस्मात् जैसें विजली गिरती है, इसप्रकार रोगी यमराजके घर जाय ॥ ८४ ॥

तिर्यगुष्णा च या नाडी सर्पगा वेगवत्तरा।
कफपूरितकण्ठस्य जीवितं तस्य दुर्लभम् ॥ ८५ ॥

अर्थ–नाडी उष्ण वक्रगति तथा सर्पके समान वहुत वेगवानहो, तथा कंठ कफसें घिरजावे ऐसा रोगीका जीवन दुर्लभ जानना ॥ ८५ ॥

चला चलितवेगा च नासिका धारसंयुता।
शीतला दृश्यते या च याममध्येच मृत्युदा ॥ ८६ ॥

अर्थ–जिसकी नाडी कांपनेवाली तथा चंचल नासिकाके श्वासोछ्वासके आधारसें चलनेवाली और शीतल ऐसी प्रतीतहो वो रोगी एकप्रहरमें मरे ऐसा जानना ॥ ८६ ॥

शीघ्रा नाडी मलोपेता मध्याह्नेऽग्निसमो ज्वरः ।
दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीयेऽह्नि म्रियेत सः ॥ ८७ ॥

अर्थ–जिस रोगीकी त्रिदोषयुक्त नाडी बहुतजल्दी चले, तथा जिसको मध्याह्नमें अग्निके समान ज्वर आवे, उस रोगीकी आयु एकदिनकी है दूसरे दिन मृत्यु होय८७॥

स्कन्देन स्पन्दते नित्यं पुनर्लगति नाङ्गुलौ ।
मध्ये द्वादशयामानां मृत्युर्भवति निश्चितम् ॥ ८८ ॥

अर्थ–जो नाडी अपने मूलस्थानमें फडके नही और ऊंगलीयोंका स्पर्श न करे उसकी बारह प्रहरमें मृत्युहोय. ऐसा जानना ॥ ८८ ॥

स्थित्वा नाडी मुखे यस्य विद्युद्द्योतिरिवेक्षते ।
दिनैकं जीवितं तस्य द्वितीये म्रियते ध्रुवम् ॥ ८९ ॥

अर्थ–जिस रोगीकी नाडी मूलस्थानके अग्रभागमें ठहरकर विजलीके सदृश तडफजावे वह एकदिन जीवे, दूसरे दिन निश्चय मरे ॥ ८९ ॥

स्वस्थानविच्युता नाडी यदा वहति वा न वा ।
ज्वाला च हृदये तीव्रा तदा ज्वालावधि स्थितिः ॥ ९० ॥

अर्थ–जिस रोगीकी नाडी अपने स्थानसें विच्युतहो (छूट) कर कभी चले कभी नहीं और हृदयमें तीव्र दाहहोय तो जबतक हृदयमें ज्वालाहै तावत्काल रोगीका जीवन है ॥ ९० ॥

अङ्गुष्ठमूलतो बाह्ये व्यङ्गुले यदि नाडिका ।
प्रहरार्द्धाद्बहिर्मृत्युं जानीयाच्च विचक्षणः ॥ ९१ ॥

अर्थ–अंगुष्ठमूल अर्थात् तर्जनी ऊंगली धरनेके स्थलमें यदि नाडीकी गति प्रतीत नहो, केवल मध्यमा और अनामिका इन दो अंगुलीसें प्रतीतहोय तो उस रोगीकी अर्ध प्रहरके उपरांत मृत्यु होय ॥ ९१ ॥

सार्द्धद्वयाङ्गुलाद्बाह्ये यदि तिष्ठति नाडिका ।
प्रहरैकाद्बहिर्मृत्युं जानीयाच्च विचक्षणः ॥ ९२ ॥

अर्थ–नाडी मूलस्थानसें २॥ अंगुल अंतर अर्थात् यदि केवल अनामिकाके शेषार्द्ध मात्रमें फडके उसकी प्रहरउपरांत अर्थात् दूसरे प्रहरमें मृत्युहोय ॥ ९२ ॥

पादाङ्गुलगता नाडी चञ्चला यदि गच्छति ।
त्रिभिस्तु दिवसैस्तस्य मृत्युरेव न संशयः ॥ ९३ ॥

अर्थ—यदि नाडी तर्जनीको सर्वांश और मध्यमा अंगलीके चतुर्थांशमें व्याप्तहो प्रतीत होवे और मध्यमाके अवशिष्ट पादत्रय और अनामिकाके सर्वांशमें न प्रतीत होय तो उस रोगीकी तीनदिनमें मृत्यु होय ॥ ९३ ॥

पादाङ्गुलगता नाडी कोष्णा वेगवती भवेत् ।
पञ्चभिर्दिवसैस्तस्य मृत्युर्भवति नान्यथा ॥ ९४ ॥

अर्थ—नाडी पूर्ववत् तर्जनी और मध्यमाके चतुर्थांशमें व्यापकहो जल्दी जल्दी चले और किंचिन्मात्र गरम प्रतीत होय तो उसरोगीकी चारदिनमें निश्चय मृत्युहोय ॥९४॥

पादाङ्गुलगता नाडी मन्दमन्दा यदा भवेत् ।
पञ्चभिर्दिवसैस्तस्य मृत्युर्भवति नान्यथा ॥ ९५ ॥

अर्थ—नाडी पूर्ववत् समग्र तर्जनी और मध्यमाके चतुर्थांशमें व्याप्तहो मन्दमन्द चले तो उसरोगीकी पांचवे दिन मृत्युहोय ॥ ९५ ॥

नाडीद्वारा आयुका ज्ञान ।

वामनाडी दीर्घरेखा बाहुमूले च स्पन्दते ।
जीवेत्पञ्चशतं वर्षं नात्र कार्या विचारणा ॥ ९६ ॥

अर्थ—जिस रोगी वामनाडी दीर्घरेखाके आकारसें भुजाकी जडमें तडफे वो १०५ वर्षजीवे इसमें संदेह नहीं ॥ ९६ ॥

दीर्घाकारा वामनाडी कर्णमूले च स्पन्दते ।
जीवेत्पञ्चशतं सार्द्धं धनिको धार्मिको भवेत् ॥ ९७ ॥

अर्थ—जिसकी वामनाडी आकारमें लंबी होकर कानकी जडमें प्रतीत होय वह सार्धपंचशतवर्ष जीवे और धनिक तथा धार्मिक होय ॥ ९७ ॥

वामनाडी स्वल्परेखा हनुमूले च स्पन्दते ।
पञ्चवर्षाधिकश्चैव जीवनं नात्रसंशयः ॥ ९८ ॥

अर्थ—जिसकी वामनाडी स्वल्परेखामें हो ठोडीकी जडमें तडफे वो पांचवर्ष अधिक जीवे इसमें संदेह नहीं ॥ ९८ ॥

नाडीद्वारा भोजनका ज्ञान ।

पुष्टिस्तैलगुडाहारे मांसे च लगुडाकृतिः । क्षीरे च स्तिमिता वेगा मधुरे भेकवद्गतिः ॥ ९९ ॥ रम्भागुडवटाहारे रूक्षशु-

ष्कादिभोजने । वातपित्तार्त्तिरूपेण नाडी वहति निष्क्र-
मम् ॥ १०० ॥

अर्थ–तैल और गुडके खानेसें नाडी पुष्ट प्रतीत होतीहै, मांसके खानेसें नाडी लकडीके आकार चलतीहै; दूधपीनेसें मंदगतिसें चलती है । मधुर आहारसें नाडी मंडकके समान चलतीहै केला, गुड, वडा रूक्षवस्तु, और शुष्कद्रव्यादि भोजनसें जैसी वातपित्तरोगमें नाडी चलती है उसप्रमाण चलेहै ॥ ९९ ॥ १०० ॥

अथ रसज्ञानम् ।

मधुरे बर्हिगमना तिक्ते स्याद्भूलतागतिः[1] । अम्ले कोष्णा
प्लवगतिः कटुके भृङ्गसन्निभा ॥ १०१ ॥ कषाये कठिना
म्लाना[2] लवणे सरला द्रुता । एवं द्वित्रिचतुर्योगे नानाध-
र्मवती धरा ॥ १०२ ॥

अर्थ–मिष्ट पदार्थ भक्षणसें नाडी मोरकीसी चाल चलती है कडुई द्रव्य भक्षणसें स्थूलगति, खट्टे पदार्थ खानेसें कुछ उष्ण और मेंडकाकीगति होती है, चरपरी द्रव्य खानेसें भौंराके आकार गति होतीहै, कसेली द्रव्य खानेसें नाडी कठोर और म्लान होतीहै, निमकीन पदार्थ खानेसें सरल (सीधी) और जल्दी चलनेवाली होती है, इसीप्रकार भिन्न भिन्न रसके एकही समय सेवन करनेसें नाडी अनेकप्रकारकी गतिवाली होतीहै ॥ १०१ ॥ १०२ ॥

अम्लैश्च मधुराम्लैश्च नाडी शीता विशेषतः । चिपिटैर्भ्र-
ष्टद्रव्यैश्च स्थिरा मन्दतरा भवेत् ॥ १०३ ॥ कूष्माण्डमूल-
कैश्चैव मन्दमन्दा च नाडिका । शाकैश्च कदलैश्चैव रक्तपू-
र्णेव नाडीका ॥ १०४ ॥

अर्थ–खट्टे पदार्थ अथवा मधुराम्ल (मिष्ट और खट्टामिला) भोजनसें नाडी शीतल होती है चिरवा औ भुनीहुई (चना, वोहरी) द्रव्य भक्षणसें नाडी स्थिर और मंदगति चलतीहै पेठा मूली अथवा कंदपदार्थके भक्षणसें नाडी मंद मंद चलतीहै शाक (पत्रपुष्पादिकका) और केलेकी फली भक्षण करनेसें नाडी रक्तपूर्णके सदृश चलेहै ॥ १०३ ॥ १०४ ॥

---

१ तिक्ते स्यात्स्थूलता गतेः । २ कषाये कठिनाम्लावा इति वा पाठः ।

मांसात्स्थिरवहा नाडी दुग्धे शीता बलीयसी । गुडैः क्षीरैश्च पिष्टैश्च स्थिरा मन्दवहा भवेत् ॥ १०५ ॥ द्रवेऽतिकठिना नाडी कोमला कठिनापि च । द्रवद्रव्यस्य काठिन्ये कोमला कठिनापि च ॥ १०६ ॥

अर्थ–मांस भक्षणसें नाडी मंदगामिनि होती है, दूधके पीनेसें नाडी शीतल और बलवती होती है, तथा गुड, दूध, और पिष्टपदार्थ (चूनके, पिट्ठी आदिके पदार्थ) भक्षणसें नाडी चंचलतारहित मंदगामिनी होतीहै, द्रवपदार्थ (कढी, पने, श्रीखंडआदि) भोजनसें नाडी कठिन होतीहै और कठोर (लड्डूके मुहार आदिसें नाडी कोमल होती है यदि द्रवपदार्थ कुछ कठोर होयतो नाडी कोमल और कठोर उभय स्वभाववती होती है ॥ १०५ ॥ १०६ ॥

उपवासाद्भवेत्क्षीणा तथा च द्रुतवाहिनी ।
संभोगान्नाडिका क्षीणा ज्ञेया द्रुतगतिस्तथा ॥ १०७ ॥

अर्थ–उपवास (निराहार) सें नाडी क्षीण और शीघ्रवाहिनी होती है एवं स्त्री संभोगसें नाडी क्षीण और शीघ्र चलनेवाली होतीहै ॥ १०७ ॥

कुपथ्यवसनाडीकीचाल ।

उष्णत्वं विषमावेगा ज्वरिणां दधि भोजनात् ॥ १०८ ॥

अर्थ–यदि ज्वरवान् पुरुष दहि खाय तो उसकी नाडी गरम और विषमवेगवती होतीहै ॥ १०८ ॥

इति श्रीमाथुरकृष्णलालाङ्गजदत्तरामेणसङ्कलिते नाडीदर्पणे द्वितीयावलोकः

अब इसके उपरान्त कितनेक रोगोंकी नाडीकी जैसी अवस्था होती है, उसको लिखतेहैं, तहां रोगनिरूपणमें प्रधानता करके प्रथम ज्वरनिरूपण करते हैं ।

ज्वरके पूर्वरूपमें ।

अङ्गग्रहेण नाडीनां जायन्ते मन्थराः प्लवाः ।
प्लवः प्रबलतां याति ज्वरदाहाभिभूतये ॥ १ ॥
सान्निपातिकरूपेण भवन्ति सर्ववेदनाः ।

अर्थ–ज्वर आनेवाली अवस्थाके कितनेक क्षण पहिले अंगमें पीडा होने लगे, नाडी मंथर (मंद) भावसें मेंडकाकी चाल चलने लगे तथा दाह ज्वरकी पूर्वव-

स्थाके वा धारामें वहनेवाले मेंडकाके समान तथा सांनिपातिक ज्वरकी पूर्व अवस्थाके प्रमाण नाना आकृतिसें गमन करे ॥ १ ॥

ज्वरके रूपमें ।

ज्वरकोपेन धमनी सोष्णा वेगवती भवेत् ॥ २ ॥

अर्थ–जिस कालमें इसप्राणीको ज्वर चढआताहै उस समय नाडी गरम और वेगवती होती है ॥ २ ॥

ऊष्मा पित्तादृते नास्ति ज्वरो नास्त्यूष्मणा विना ।
उष्णा वेगधरा नाडी ज्वरकोपे प्रजायते ॥ ३ ॥

अर्थ–विना पित्तके गरमी नहीं और विना गरमीके ज्वर नहीं होता अतएव ज्वरके वेगमें नाडी गरम और वेगवान् होती है ॥ ३ ॥

ज्वरे च वक्रा धावन्ती तथा च मारुतप्लवे ।
रमणान्ते निशि प्रातस्तथा दीपशिखा यथा ॥ ४ ॥

अर्थ–ज्वरके कोपमें और वादीमें नाडी टेढी और दोडती चलती है तथा मैथुनकरनेके पिछाडी रात्रिमें और प्रातःकालमें नाडी दीपशिखाके समान मंद गमन करती है ॥ ४ ॥

वातज्वरे ।

सौम्या सूक्ष्मा स्थिरा मन्दा नाडी सहजवातजा ।
स्थूला च कठिना शीघ्रा स्पन्दते तीव्रमारुते ॥ ५ ॥
वक्रा च चपला शीतस्पर्शा वातज्वरे भवेत् ।

अर्थ–स्वाभाविक वायुके द्वारा नाडी कोमल, सूक्ष्म, स्थिर, और मंद वेगवाली होती है । तीव्रवायुद्वारा नाडी स्थूल, कठिन, तथा जल्दी चलनेवाली होती है । और वातज्वरमें टेढी, चपल, तथा शीतल स्पर्शवान् नाडी होती है ॥ ५ ॥

द्रुता च सरला दीर्घा शीघ्रा पित्तज्वरे भवेत् ।
शीघ्रमाहननं नाड्याः काठिन्याच्चलते तथा ॥ ६ ॥

अर्थ–पित्तज्वरमें नाडी शीघ्र चलनेवाली, सरल, दीर्घ, और कठिनताके साथ शीघ्र फडकनेवाली होती है ॥ ६ ॥

नाडी[१] तन्तुसमा मन्दा शीतला श्लेष्मदोषजा ।

---

१ मंदाच सुस्थिरा शीता पिच्छला श्लेष्मिणोभवेत् इति पाठांतरम् ।

मलाजीर्णे नातितरां स्पन्दनं च प्रकीर्त्तितम् ॥ ७ ॥

अर्थ–कफके प्रकोपमें नाडी तंतुवत् सूक्ष्म, मंदवेगवाली, और शीतल होती है । और मलाजीर्णमें अत्यंत नहीं फडकती ॥ ७ ॥

द्वंद्वजनाडी

चञ्चला[1] तरला स्थूला कठिना वातपित्तजा । ईषच्च दृश्यते तूष्णा मन्दा स्याच्छ्लेष्मवातजा ॥ ८ ॥ निरन्तरं खरं रूक्षं मन्दश्लेष्मातिवातलम् । रूक्षवाते भवेत्तस्य नाडी स्यात्पित्तसन्निभा ॥ ९ ॥ सूक्ष्मा शीता स्थिरा नाडी पित्तश्लेष्मसमुद्भवा ॥ १० ॥

अर्थ–वातपित्तकी नाडी चंचल, तरल, स्थूल, और कठोर होतीहै । वातकफकी नाडी कुछ गरम और मंदगामिनी होतीहै । जिस नाडीमें किंचिन्मात्र कफ और अधिक वात होती है । वह अत्यंत खर और रूक्ष होती है । जिसके नाडीमें वायुका अत्यंत कोप होय उसकी पित्तके सदृश अर्थात् अत्यंत वक्र और अत्यंत स्थूल होय, पित्तकफज्वरमें नाडी सूक्ष्म शीतल, और मन्दवेगवाली होतीहै ॥ १० ॥

रुधिरकोपजानडी ।

मध्ये करे वहेन्नाडी यदि सन्तापिता ध्रुवम् ।
तदा नूनं मनुष्यस्य रुधिरापूरितामलाः ॥ ११ ॥

अर्थ–मध्य करमें अर्थात् मध्यमांगुली निवेशस्थलमें नाडी संतापित होकर तडफे तो जानेकि वातादि दोपत्रय रक्तप्रकोपकरके परिपूर्ण है । अर्थात् रुधिरसें दूषितहै ॥ ११ ॥

आगन्तुकरूपभेदमाह ।

भूतज्वरे सेक इवातिवेगात् धावन्ति नाड्यो हि यथाब्धिगामाः ।

अर्थ–भूतज्वरमें नाडी अत्यंत वेगसें चलती है जैसें समुद्रमें जानेवाली नदियोंका प्रवाह वेगसें चलता है ॥ १२ ॥

तथा ।

एकाहिकेन क्वचन प्रदूरे क्षणान्तगामा विषमज्वरेण ॥

---

[1] वक्रा च ईषच्चपला कठिना वातपित्तजा इति पाठान्तरम् ।

द्वितीयके वाथ तृतीयतुर्य्यें गच्छन्ति तप्ता भ्रमिवत् क्रमेण १३

अर्थ-एकाहिकज्वरमें नाडी सरलमार्गको त्यागकर क्षणक्षणमें पार्श्वगामिनी होती है तथा द्वितीय, तृतीय (तिजारी) और चातुर्थनामक विषमज्वरमें उष्ण होकर इतस्ततो धावमाना होती है ॥ १३ ॥

अन्यत्रापि ।

उष्णवेगधरा नाडी ज्वरकोपे प्रजायते । उद्वेगक्रोधकामेषु भयचिन्ताश्रमेषु च । भवेत् क्षीणगतिर्नाडी ज्ञातव्या वैद्यसत्तमैः १४

अर्थ-गरम और वेगवान् नाडी ज्वरके कोपमें होती है उद्वेग, क्रोध, कामबाधा भय, चिन्ता, और श्रम इनमें नाडी क्षीणगतिवाली होती है अर्थात् मंद मंद गमन करती है ॥ १४ ॥

प्रसङ्गादाह ।

व्यायामे भ्रमणे चैव चिन्तायां श्रमशोकतः ।
नाना प्रभावगमना शिरा गच्छति विज्वरे ॥ १५ ॥

अर्थ-व्यायाम (दंडकसरत) करनेसें, डोलनेसें, चिंता, श्रम, और शोकसें, एवं ज्वररहित मनुष्यकी नाडी अनेकप्रभावसें गमन करतीहै ॥ १५ ॥

अजीर्णरूपमाह ।

अजीर्णे तु भवेन्नाडी कठिना परितो जडा ।
प्रसन्ना च द्रुता शुद्धा त्वरिता च प्रवर्तते ॥ १६ ॥

अर्थ-आमाजीर्ण और पक्काजीर्ण दोनोंमें नाडी कठोर और दोनोपार्श्वोंमें जड होती है इसीप्रकार कभी निर्मल निर्दोष तथा शीघ्रवेगवाली होती है ॥ १६ ॥

तत्र विशेषमाह ।

पक्काजीर्णे पुष्टिहीना मन्दं मन्दं वहेज्जडा ।
असृक्पूर्णा भवेत् कोष्णा गुर्वी सामा गरीयसी ॥ १७ ॥

अर्थ-पक्काजीर्णमें नाडी पुष्टतारहित मंद मंद चलती है । तथा भारी होती है एवं रुधिरकरके परिपूर्णनाडी गरम, भारी होतीहै और आमवातकी नाडी भारी होती है ॥ १७ ॥

लघ्वी भवति दीप्ताग्नेस्तथा वेगवती मता ।

मन्दाग्नेः क्षीणधातोश्च नाडी मन्दतरा भवेत् ।
मन्देऽग्नौ क्षीणतां याति नाडी हंसाकृतिस्तथा ॥ १८ ॥

अर्थ–दीप्ताग्निवाले मनुष्यकी नाडी हलकी और वेगवती होतीहै, मंदाग्निवालेकी और क्षीणधातुकपुरुषकी नाडी मंदतर होतीहै, इसीप्रकार जिस मनुष्यकी जठराग्नि सर्वथा मंदहोइहो उसकी नाडी हंसके समान अतिशय मंदहोती है ॥१८॥

आमाश्रमे पुष्टिविवर्धनेन भवन्ति नाड्यो भुजगाग्रमानाः ।
आहारमान्द्यादुपवासतो वा तथैव नाड्योऽग्रभुजाभिवृत्ताः॥१९॥

अर्थ–आम, और परिश्रम न करनेसें तथा देहमें अत्यंत पुष्टता होनेसें नाडी सर्पके अग्रभागके सदृश होतीहै इसीप्रकार थोडा भोजन करनेसें या उपवास करनेसें नाडी भुजाके अग्रभागमें सर्पके अग्रभाग समान होतीहै ॥ १९ ॥

ग्रहणीरोगे ।

पादे च हंसगमना करे मण्डूकसंप्लवा ।
तस्याग्नेर्मन्दता देहे त्वथवा ग्रहणीगदे ॥ २० ॥

अर्थ–जिसकी पैरकी नाडी हंसके समान और हाथकी नाडी मैंडकाके समान चले उसके देहमें मंदाग्निहै अथवा संग्रहणी रोगहै ऐसा जानना ॥ २० ॥

भेदेन शान्ता ग्रहणीगदेन निर्वीर्यरूपा त्वतिसारभेदे ।
विलम्बिकायां प्लवगा कदाचिदामातिसारे पृथुता जडा च२१

अर्थ–संग्रहणीका दस्तहोनेके उपरांत नाडी शांतवेगा होतीहै अतिसाररोगका दस्तहोनेके उपरांत नाडी सर्वथा बलहीन होजातीहै विलंबिकारोगमें नाडी मैंडकाके तुल्य चलतीहै इसीप्रकार आमातिसारमें नाडी स्थूल और जडवत होतीहै ।

विषूचिकाज्ञानम् ।

निरोधे मूत्रशकृतोर्विड्ग्रहे त्वितराश्रिताः ।
विषूचिकाभिभूते च भवन्ति भेकवत्क्रमाः ॥ २२ ॥

अर्थ–केवल मल वा केवल मूत्र अथवा मलमूत्र दोनो एसाथ वंद होजावे वा इच्छापूर्वक इनके वेगको रोकनेसें एवं विषूचिका रोगमें नाडीकी गति मैंडकाकी चालके समान होतीहै ॥ २२ ॥

अनाहमूत्रकृच्छ्रे ।

अनाहे मूत्रकृच्छ्रे च भवेन्नाडीगरिष्ठता ।

अर्थ-अनाह अफरा और मूत्रकृच्छ्र रोगमें नाडी गुरुतर अर्थात् भारी होती है ॥

शूलरोगे ।

वातेन शूलेन मरुत्प्लवेन सदैव वक्रा हि शिरा वहन्ती ।
ज्वालामयी पित्तविचेष्टितेन साध्या न शूलेन च पुष्टिरूपा ॥ २३ ॥

अर्थ-वायुशूलमें और वायुके प्रखरता निर्बंधनमें नाडी सदैव अत्यंत टेढी चलती है पित्तके शूलमें यह अतिशय गरम होती है। और आमशूलमें पुष्टियुक्त होती है ॥ २३ ॥

प्रमेहज्ञान ।

प्रमेहे ग्रन्थिरूपा सा सुतप्ता त्वामदूषणे ।

अर्थ-प्रमेह रोगमें नाडी ग्रंथि अर्थात् गांठके आकार प्रतीत होयहै और आमवात रोगमें नाडी सर्वकालमें उष्ण होती है ॥

विषविष्टम्भगुल्मज्ञानम् ।

उत्पित्सुरूपा विषरिष्टकायां विष्टम्भगुल्मेन च वक्ररूपा ।
अत्यर्थवातेन अधः स्फुरन्ती उत्तानभेदिन्यसमाप्तकाले ॥ २४ ॥

अर्थ-विषभक्षण वा सर्पादि दंशजन्य अरिष्टलक्षण प्रकाशित होनेसें तत्कालमें नाडी देखनेसें बोधहोयहैं । कि इसके यह रोगकी नवीन उत्पन्न होताहै । और विष्टंभ तथा गुल्म रोगमे विषके तुल्य और विशेषता यह होतीहै कि उस-नाडीकी गति वक्ररूप होतीहै। इन दोनों पीडामें अत्यंत वायुका प्रकोप होनेसें नाडी अधस्फुरित होय एवं इनकी असंपूर्णावस्थामें अर्थात् पूर्वरूपावस्थामें नाडी अत्यंत ऊर्ध्व गतिहोय ॥ २४ ॥

गुल्मे विशेषमाह ।

गुल्मेन कम्पाथ पराक्रमेण पारावतस्येव गतिं करोति ॥ २५ ॥

अर्थ-गुल्मरोगमें नाडी कंपितहो बलपूर्वक खबुतरकी तुल्य गमन करती है ।

अथ भगन्दरज्ञानम् ।

व्रणार्थं कठिने देहे प्रयाति पैत्तिकं क्रमम् । भगन्दरानुरूपेण
नाडी व्रणनिवेदने ॥ २६ ॥ प्रयाति वातिकं रूपं नाडीपावकरूपिणी

अर्थ-व्रणरोगकी अपक्वअवस्थामें नाडीकी गति पैत्तिक नाडीके तुल्य होतीहै ।

भगंदर तथा नाडीव्रण रोगमें नाडीकी गति वातनाडीके तुल्य और अत्यंत उष्ण होतीहै ॥ २७ ॥

वान्तादिज्ञानम् ।

वान्तस्य शल्याभिहतस्य जन्तोर्वेगावरोधाकुलितस्य भूयः । गतिं विधत्ते धमनी गजेन्द्रमरालमानेव कफोल्बणेन ॥ स्त्री-रोगादिकमपि रक्तादिज्ञानक्रमेण ज्ञातव्यम् ॥ २८ ॥

अर्थ–वमित (जिसने रद्द करीहो) शल्याभिहत (जिसके किसी प्रकारका बाण आदि शल्य लगाहो) और वेगरोधी (जिसने मल मूत्रको धारण कर रक्खाहो) ऐसे प्राणियोंकी नाडी तथा कफोल्बणा नाडी हाथी और हंसादिक-की गतिके समान चलती है । इसीप्रकार रक्तादि ज्ञानकरके अनुक्त जो स्त्रीके रोग प्रदरादिक उनकोभी वैद्य अपनी बुद्धि मानीसें जानलेवे यह नाडीपरीक्षा शंकर-सेनके मतानुसार लिखिहै ॥ २८ ॥

नाडीस्पन्दनसंख्या ।

षष्ट्यास्पन्दास्तु मात्राभिः षट्पञ्चाशद्भवन्ति हि । शिशोः सद्यः प्रसूतस्य पञ्चाशत्तदनन्तरम् ॥ २९ ॥ चत्वारिंशत्ततः स्पन्दाःषट्त्रिंशद्यौवने ततः । प्रौढस्यैकोनत्रिंशत्स्युर्वार्धकेऽष्टौ च विंशतिः ॥ ३० ॥

अर्थ–अब नाडीके फडकनेकी संख्या कहतेहै, जैसें कि ६० दीर्घ अक्षर उ-च्चारण करनेमें जितना काल लगताहै उतने समयमें अर्थात् १ पलमें तत्काल हुए बालकी नाडीकी स्पंदनसंख्या ५६ वार होती है । इसके उपरान्त अवस्था बढने-के अनुसार ५० तथा ४० वार होती है । यौवन अवस्था अर्थात् जवानीमें ३६ वार होती है । और प्रौढ अवस्थामे २९ वार, और बुढापेमें २८ वार, एकपलमें नाडी फडकती है ॥ २९ ॥ ३० ॥

पुंसोऽतिस्थविरस्य स्युरेकत्रिंशदतः परम् । योषितां पुरुषा-णांच स्पन्दास्तुल्याः प्रकीर्त्तिताः ॥ ३१ ॥ प्रौढानां रम-णीनांतु द्व्यधिकाः सम्मता बुधैः ॥ ३२ ॥

अर्थ–अति वृद्धहोनेसें नाडीकी संख्या फिर बढनें लगती है अर्थात् एकपलमें ३१ वार तडफती है यह अवस्थाभेदकरके संपूर्ण स्पन्दन संख्या लिखि गईहै ।

यह संख्या स्त्री और पुरुष दोनोंमें समान कही है । परंतु केवल प्रौढावस्थामें स्त्री-की नाडी संख्या पुरुष संख्याकी अपेक्षा अधिक अधिक अर्थात् प्रौढ पुरुषकी स्पन्दनसंख्या प्रतिपलमें २९ वार होती है । और प्रौढा स्त्रीकी संख्या ३१ वार होती है ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

दशगुर्वक्षरोच्चारकालः प्राणः षडात्मकैः ।
तैः पलं स्यात्तु तत् षष्ट्या दण्ड इत्यभिधीयते ॥ ३३ ॥

अर्थ–एक दीर्घवर्णउच्चारण करनेमें जितना समय लगता है उसको एक मात्रा अथवा निमेष कहते है । १० मात्राका १ प्राण ६ प्राणका १ पल ६० पलका १ दंड होताहै । अतएव एक पलका साठ भाग उसमें एक भागको विपल कहतेहै उसीको मात्रा कहते है ॥ ३३ ॥

मतान्तरेण ।

स्वस्थानां देहिनां देहे वयोवस्थाविशेषतः ।
प्रवहन्ति यथा नाड्यस्तत्संख्यानमिहोच्यते ॥ ३४ ॥

अर्थ–अब मतान्तरसैं कहते है कि स्वस्थपुरुषोंके देहमें आयुकी अवस्था विशेषकरके जैसें नाडी चलती है उनकी संख्या इसग्रंथमें लिखते है ॥ ३४ ॥

सार्धद्वयपलः कालो यावद्गच्छति जन्मतः ।
तावत्प्रकम्पते नाडी चत्वारिंशच्छताधिकम् ॥ ३५ ॥

अर्थ–बालकके जन्मलेनेसैं यावत् २॥ पल व्यतीत नहीं हो उतने समयमें १४० वार नाडी वारंवार कंपन होती है ॥ ३५ ॥

तदूर्ध्वं हायनं यावत्सार्द्धद्वयपलेन सा ।
मुहुः प्रकम्पमाधत्ते त्रिंशद्वारं शतोत्तरम् ॥ ३६ ॥

अर्थ–फिर १ वर्षकी अवस्थापर्यंत बालककी नाडी २॥ पलमें १३० वार तडफती है ॥ ३६ ॥

उपरिष्टादाद्वितीयात्तावत्काले शरीरिणः ।
ततः प्रकम्पते नाडी दशाधिकशतं मुहुः ॥ ३७ ॥

अर्थ–वर्ष दिनसैं लेकर जबतक यह बालक दो वर्षका होताहै तावत्कालपर्यंत नाडी ढाई पलमें ११० वार वारंवार तडफती है ॥ ३७ ॥

ततस्त्रिवत्सरं व्याप्य देहिनां धमनी पुनः ।

मुहुः प्रकम्पते तद्वत्सार्द्धद्वयपले शतम् ॥ ३८ ॥

अर्थ-फिर दो वर्षसैं उपरांत तीन वर्षतकके वालककी नाडी २॥ पलमें १०० वार वारंवार तडफती है ॥ ३८ ॥

ततस्त्वासप्तमाद्वर्षान्नवतिः स्यात्प्रवेपनम् ।
धमन्यास्तन्मिते काले प्रत्यक्षादनुभूयते ॥ ३९ ॥

अर्थ-फिर तीन वर्षसैं सात वर्षतकके वालककी नाडी २॥ पलमें ९० वार वारंवार चलती है ॥ ३९ ॥

ततश्चतुर्दशं तावत्पञ्चाशीतिः प्रवेपनम् । त्रिंशद्वर्षमभिव्याप्य ततोऽशीतिः प्रकीर्त्तितम् । शतार्द्धवत्सरं व्याप्य कम्पनं पञ्चसप्ततिः । ततोऽशीतौ प्रकथितं षष्टिवारं प्रवेपनम् ॥ ४० ॥

अर्थ-फिर सात वर्षसैं लेकर चौदह वर्षकी अवस्थातक इस प्राणीकी नाडी २॥ पलमें ८५ वार तडफती है । और चौदह वर्षकी अवस्थासैं लेकर ३० वर्षकी अवस्थापर्यंत ढाई पलमें ८० वार तडफती है । तीस वर्षके उपरांत पंचास वर्ष पर्यंत ७५ वार कंपन होती है । और पंचास वर्षसैं लेकर अस्सी वर्षकी अवस्थातक इस प्राणीको नाडी २॥ पलमें ६० वार कंप होती है ॥ ४० ॥

वयोऽवस्थाक्रमेणैवं क्षीयन्ते गतयो मुहुः ।
सार्द्धद्वयपले काले नाडीनामुत्तरोत्तरम् ॥ ४१ ॥

अर्थ-फिर जैसे जैसे अवस्था क्षीण होती जाती है उसी प्रकार नाडीका गमनभी २॥ पलमें क्षीण होता जाताहै ॥ ४१ ॥

एवं बहुविधाद्रोगात्तत्तल्लिङ्गानुबोधनी ।
नाडीनां च गतिस्तद्वद्भवेत्कालात्पृथक् पृथक् ॥ ४२ ॥

अर्थ-इसप्रकार अनेकविध रोगोंसैं उन्हीं लिङ्गोंकी बोधन करनेवाली नाडियोंकी गति पृथक् पृथक् कालमें पृथक् पृथक् होती है ॥ ४२ ॥

हृदयस्य बृहद्भागः संकोचं प्राप्यते यदि ।
प्रसारयेत्तदा नाडी वायुना रक्तवाहिनी ॥ ४३ ॥

अर्थ-जिस समय हृदयका बृहद्भाग संकुचित होताहै और खुलताहै उससमय रक्तवाहिनी नाडियोंकी गति पवनके वेगसैं प्रस्पन्दन होती है ॥ ४३ ॥

नाडीगतिरतिक्षीणा भवेन्मलविभेदतः ।
जीर्णज्वराद्दल्परक्ता दुर्बलत्वाच्च तादृशी ॥ ४४ ॥

अर्थ–मलके निकलनेसैं नाडीकी गति अत्यंत क्षीण होती है । उसीप्रकार जीर्णज्वरसैं अल्परुधिरसैं और दुर्बलतासैंभी नाडी अतिक्षीण होती है ॥ ४४ ॥

तर्पयन्त्यसृजं देहे व्याघातैर्गतिभेदतः ।
तेजःपुञ्जा चञ्चला च दुर्बला क्षीणधीरकैः ॥ ४५ ॥

अर्थ–ये संपूर्ण रक्तवाहिनी नाडी आघातकरके और अपनी गतिके भेदसैं देहमें रुधिरको तर्पण करेहै अर्थात् सर्वत्र फैलाती है । उनकी गति भेद कहतेहैं । जैसे तेजःपुंजा, चंचला, दुर्बला, क्षीणदा, और धीरगामिनी, ये नाडियोंकी पांच प्रकारकी गती है ॥ ४५ ॥

चंचला और तेजःपुंजगति ।

रक्तोष्णे शीघ्रगा नाडी ज्वरे च चञ्चला भवेत् ।
ज्वरारम्भे तथा वाते तेजःपुञ्जा गतिः शिरा ॥ ४६ ॥

अर्थ–तहां रुधिरके कोपमें गरमीमें नाडी शीघ्र चलती है, उसीप्रकार ज्वरमें चंचला नाडी होती है और ज्वरके आरंभमें तथा वातके रोगमें नाडीकी तेजःपुंजा गति होती है ॥ ४६ ॥

दुर्बलाऔरक्षीणनाडी ।

दुर्बले ज्वररोगे च अतिसारे प्रवाहिके ।
दुर्बला क्षीणदा नाडी प्रबला प्राणघातिका ॥ ४७ ॥

अर्थ–दुर्बलतामें ज्वरमें अतिसार और प्रवाहिकारोगमें नाडीकी दुर्बला गति होती है, क्षीणदा नाडीप्रबल प्राणोंकी नाशक होती है ॥ ४७ ॥

बहुकालगता रोगाः सा नाडी धीरगामिनी ।

अर्थ–जिसप्राणीके बहुतदिनोंसैं रोगहोवे उसकी नाडी धीरगामिनी होती है ।

सुखीपुरुषकीनाडी ।

हंसगा चैव या नाडी तथैव गजगामिनी ।
सुखं प्रशस्तं च भवेत्तस्यारोग्यं भवेत्सदा ॥ ४८ ॥

अर्थ–जिसप्राणीकी नाडी हंसकीसी अथवा हाथीकीसी चाल चले उसको उत्तम सुखहोय और सदैव आरोग्यरहे ॥ ४८ ॥

सुव्यक्तता निर्मलत्वं स्वस्थानस्थितिरेव च।
अमन्दत्वमचाञ्चल्यं सर्वासां शुभलक्षणम् ॥ ४९ ॥

अर्थ-उत्तम प्रकारसें प्रतीतहो निर्मल अपने स्थानमें स्थिति, अमंदत्व और चांचल्यता रहितहो येसंपूर्ण नाडियोंके शुभ लक्षण जानने ॥ ४९ ॥

दोषसाम्याच्च सादृश्यादनुक्तासु रुजास्वपि।
ज्ञातव्या धमनीधर्मा युक्तिभिश्चानुमानतः ॥ ५० ॥

अर्थ-यह कितनेएक रोगोंमें नाडीकी प्रकृति लिखी है, इस्सें भिन्न अन्य समस्त रोगोंमें जैसी जैसी नाडियोंकी गति होती है उसको वैद्य अनुमान और युक्तिद्वारा जाने, अर्थात् जिस रोगकी जिस जिस रोगके साथ सादृश्यताहै अथवा जिसकिसी रोगमें संपूर्ण कुपितदोषोंके साथ अन्य किसीरोगके कुपित दोषोंकी साम्यता मिले उन उन रोग समस्तोंमें नाडीकी एकविध गति होतीहै ऐसा जानना ॥ ५० ॥

नाडीदर्शनानंतरहस्तप्रक्षालन।

नाडीं दृष्ट्वा तु यो वैद्यो हस्तप्रक्षालनं चरेत्।
रोगहानिर्भवेच्छीघ्रं गंगास्नानफलं लभेत् ॥ ५१ ॥

अर्थ-जो वैद्य रोगीकी नाडी देखकर हाथको जलसें धोताहै, तो जिसरोगीकी नाडीदेखी उसका रोग शीघ्र नष्टहोय, और वैद्यको गंगास्नानका फल प्राप्तहोय ॥५१॥

तथाच।

यो रोगिणः करं स्पृष्ट्वा स्वकरं क्षालयेद्यदि।
रोगास्तस्य विनश्यन्ति पङ्कःप्रक्षालनाद्यथा ॥ ५२ ॥

अर्थ-जो वैद्य रोगीकी नाडी देख अपने हाथको धोताहै इसकर्मसैं जैसै धोनेसै कीच जाती है इसप्रकार उस रोगीका रोग दूर होताहै ॥ ५२ ॥

इति श्रीपाठकज्ञातीयमाथुरकृष्णलालसूनुना दत्तरामेण निर्मिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नान्तर्गते नाडीदर्पणे आयुर्वेदोक्तनाडीपरीक्षावर्णननामचतुस्त्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३४ ॥

अथ यूनानीमतानुसारनाडीपरीक्षामाह ॥

नाडीनामान्तरं नब्जं यूनानी वैद्यके मतः ।
विधास्ये तत्क्रमं चात्र वैद्यानां कौतुकाय च ॥ १ ॥

अर्थ–यूनानी वैद्यनाडीको नब्ज कहते हैं उस नब्जका क्रम अर्थात् नब्जपरीक्षाकोमें वैद्योंके कौतुकनिमित्त लिखताहू ॥ १ ॥

हयवानीचैव नफसानी रूहद्वयमुदाहृदम् ।
हृदयस्थं शिरस्थं च देही देहसुखावहम् ॥ २ ॥

अर्थ–रूह दो प्रकारकी है एक हयवानी दूसरी नफसानी हयवानी हृदयमें रहतीहै । और नफसानी मस्तकमें रहती है । ए दोनो देहधारियोंकी देहको सुखदायक है ॥ २ ॥

तत्सङ्गतास्तु या नाड्यः शुरियानसवः क्रमात् ।
हृत्पद्मे यास्तु सल्लग्नाः समन्तात्प्रस्फुरन्ति ताः ॥ ३ ॥

---

१ मानसिक शिराके परिवर्तनको नाडी कहते, वह मनके प्रफुल्लित और संकुचित होनेसें चलतीहै । इसका यह कारणहै कि उसके विकसित होनेसें वाहरी पवन भीतर जातीहै, इसीसें हयवानीरूह जो मनमेंहै वह प्रसन्न होतीहै । और उष्ण पवनके दूरकरनेको हृत्पद्म संकुचित होताहै, इन दोनो कारणोंसें मनुष्यके संपूर्ण देहकी चेष्टा और उसके रोग तथा स्वस्थताका ज्ञान होताहै इस नाडीके दश भेदोंसें शरीरकी चेष्टा प्रतीत होती है ।

प्रथमतो यह कि यह कितनी विकासित और कितनी संकुचित होतीहै, इसके विस्तार (लंबाव) आयत (चोडाव) और गंभीरादि भेदसें नौ भेद होतेहै, अर्थात् कितनी लंवी, कितनी चौडी, और कितनी गंभीर इनतीनोको अधिक न्यून और समानताके साथ प्रत्येकके गुणन करनेसें नौ भेद होजातहै । जैसे १ दीर्घ २ ह्रस्व ३ समान ४ स्थूल ५ कृश और ६ समानविस्तृत ७ वहिर्गति अत्युच्च ८ अंतर्गति अतिनीच ९ उच्चनीचत्वसमान ।

१ अति लंबनाडीमें अति उष्णताके कारण रोगकी आधिक्यता प्रतीत होतीहै । २ न्यूनलंबनाडीमें गरमीके न्यून होनेसें रोगकी न्यूनता प्रतीत होतीहै, ३ समान लंबनाडीमें प्रकृतिकी उष्णता यथार्थ रहतीहै, । ४ अधिक विस्तृतमें शरदी अधिक होतीहै । अतएव यह नाडी अपने अनुमानसें अधिक चोडी होती है ।

अर्थ-उस रूहके साथ लगीहुई जो नाडी है वो दो हैं एक **शुरियान्** दूसरी असव इनमें शुरियान् नाडी हृत्पद्ममें लगरहीहै उस्सें सर्वत्र स्फुरण होताहै ॥ ३ ॥

शिरोन्तर्भागसम्बद्धास्ताभिश्चेष्टादिकं भवेत् ।
श्रेष्ठो जीवनिवासोहृद्राज्ञो राज्यासनं यथा ॥ ४ ॥

अर्थ-और दूसरी असव नामक जो नाडी है, वह शिरोन्तरभाग अर्थात् मस्तकके भीतर लगरहीहै, इन नाडीयोंकरके इसदेहकी चेष्टादि होतीहै । जैसें राजा राजसिंहासनपर स्थितहो शोभित होताहै । उसीप्रकार जीवका श्रेष्ठनिवास हृदय स्थान है ॥ ४ ॥

तद्भवाधमनी मुख्या मनुष्यमणीबन्धगा ।
परीक्षणीया भिषजाह्यङ्गुलीभिश्चतसृभिः ॥ ५ ॥

अर्थ-उन हृद्गतनाडीयोंमें मनुष्यके पहुचेकी धमनी नाडी मुख्यहै । उसको वैद्य चार उंगली रखकर परीक्षा करे । अपने शास्त्रमें तीन उंगलीसें परीक्षा करना सिखाहै परंतु यूनानी वैद्य चार दोषोंको चार उंगलियोंसें देखना कहते है ॥ ५ ॥

यथैणगतिपर्यायस्तद्वदुत्प्लुत्य गच्छति ।
गिजाली गतिराख्याता पित्तकोपविकारतः ॥ ६ ॥

अर्थ-जैसै मृगकाबच्चा उछलता कूदता चलता है इस प्रकार नाडीकी गतिको **गिजाली** कहतेहै । यह पित्त कोप विकारको सूचित करती है ॥ ६ ॥

तरङ्गनाममोजस्यात् मोजीगतिरितीरिता ।
निवेदयतिवर्ष्मस्थं वायोरूष्माणमेव सा ॥ ७ ॥

अर्थ-यूनानी जलकी लहरको मौज कहते है उस मौज सदृश नाडीकी गतिको **मौजी** गति कहते है यह देहस्थ पवनकी गरमीको जाहिर करती है ॥ ७ ॥

दूदस्यात्क्रिमिपर्यायो दूती तस्य गतिः स्मृता ।
श्लेष्माणसंचयं चामं प्रकटीकुरुते हि सा ॥ ८ ॥

अर्थ-दूद (कानसलाई आदि) कृमिका पर्याय है अतएव तद्विशिष्टा नाडीकी गतिको **दूदी** गति कहते है । यह कफके संचयको और आमको प्रकाशित करती है ॥ ८ ॥

उमल्पिपीलिकामोर उमली तद्गतिः स्मृता ।

यस्य नाडी तथा गच्छेन्मृतिं तस्याशु निर्दिशेत् ॥ ९ ॥

अर्थ–उमल चैंटी (कीडी) और मोरका नामहै अतएव इन्हो किसी गतिको उमली गति कहते हैं । जिस पुरुपकी नाडी ऐसी अर्थात् मोर चैंटी कीसी चले वो प्राणी जलदी मृत्युको प्राप्तहो ॥ ९ ॥

असिपत्रस्य पर्यायो मिन्शार इति कीर्त्तितः ।
यथास्यात्तत्क्रमः काष्ठे मिन्शारी सा गतिर्भवेत् ॥ १० ॥
तद्गतिं धमनीधत्ते बाह्यान्तः शोथरोगिणः ।

अर्थ–आरेका पर्याय यूनानीमें **मिन्शार** है वो जैसे लकडीके ऊपर चलता है इसप्रकार नाडीके गमन करनेको **मिन्शारी** गति कहतेहै । इसप्रकारकी नाडी वाहरभीतर सोथ रोगीकी चलती है ॥ १० ॥

जन्वलफारनाम्नीया गतिर्मूषकपुच्छवत् ॥ ११ ॥
पित्तश्लेष्मप्रकोपेण धमन्याः सम्भवेत्किल ।

अर्थ–जिस नाडीकी गति मूपक (चूहे) की पुच्छसदृशहो अर्थात् एक ओरसे मोटी और दूसरी तरफ क्रमसैं पतलीहो उसको **जन्वलफार** गति कहते है यह पित्तकफके कोपमें होती है ॥ ११ ॥

माली शलाका सदृशी सूक्ष्मा धीरा बलात्ययात् ॥ १२ ॥
गत्याघातद्वयं यस्यामधस्तादङ्गुलेर्भवेत् ।
जुलफिकरस्तत्स्मृता पित्तश्लेष्मदग्धप्रबोधिनी ॥ १३ ॥

अर्थ–जो नाडी सलाईके आकार अत्यंत सूक्ष्म और धीरगामिनी होय वो **माली** कहाती है यह बल नाश होनेसैं होती है और जो नाडी मध्यमांगुलीमें दोवार आघातकरे वह पित्तकफ दग्धको बोधन करती है इसको **जुलफिकर** कहते हैं ॥ १२ ॥ १३ ॥

मुत्तंइद प्रस्फुरन्तीया गतिः कोष्ठस्य रूक्षताम् ।
विड्ग्रहत्वं च सौदावी विचारान् ज्ञापयत्यपि ॥ १४ ॥

अर्थ–जिस नाडीके प्रस्फुरणसैं कोठेको रूक्षता प्रगटहोवे उसको **मुत्तंइद** कहते है और इसीसैं मलवंधका ज्ञान होताहै यह **सौदावी** (वादीकी) नाडीके विचारसैं जाने ॥ १४ ॥

इर्तिशा कम्पपर्यायस्तद्विशिष्टा तु या भवेत् ।
मुर्त्तइश्नाम सा ज्ञेया सफ़रासौदाविकारयुक् ॥ १५ ॥

अर्थ—कंपको फारसीमें इर्तिशा कहते है उसके समान जो नाडी हो उसको मुर्त्तइस नाडी कहते है यह सफरा (पित्त) और सौदा दोनोंके मिश्रितावस्थामें होती है ॥ १५ ॥

मुम्तिला पूर्त्ति तूद्दिष्टाऽसृजोस्यां मुम्तिली तु सा ।
तमः कफादधोगाया मुन्खफिज् सा प्रकीर्त्तिता ॥ १६ ॥

अर्थ—परिपूर्णको फारसीमें मुम्तिला कहतेहै, अतएव जिस नाडीसें रुधिरकी परिपूर्णता प्रतीतहो उस नाडीकी गतिको मुम्तिली कहतेहै जो नाडी तमोगुण या कफसें अधोभागमें गमनकरे उसको मुम्खफिज् नाडी कहतेहै ॥ १६ ॥

उर्ध्वमुत्प्लुत्य या गच्छेत्किंचिन्मायुप्रकोपतः ।
शाहक्बुलन्द सा ख्याता धमनी संपरीक्षकैः ॥ १७ ॥

अर्थ—जो नाडी पित्तके प्रकोपसैं उछलकर ऊपरको गमनकरे उसको नाडीके ज्ञाता वैद्य शाहक्बुलन्द नामक कहतेहै ॥ १७ ॥

चतुरङ्गुलिसंस्थानादपि दीर्घा तवीलसा ।
दराज इति पर्यायस्तस्या एव निपातितः ॥ १८ ॥

अर्थ—जो नाडी चारअंगुलसें भी अधिक लंबीहो उसको तवील ऐसा कहतेहै और उसी नाडीका नामान्तर दराज है ॥ १८ ॥

परिमाणान्न्यूनरूपा सा कसीर समीरिता ।
अमीक निम्नगा या च अरीज आयती स्मृता ॥ १९ ॥

अर्थ—जितना नाडीका परिमाण कहाहै यदि उस्सैं न्यूनहो उसको कसीर कहतेहै और अधोगामिनी नाडीको अमीक कहतेहै और लंबी नाडीको अरीज कहाहै ॥ १९ ॥

यथा गतिस्तु दोषाणां धत्ते प्राज्यत्वहीनते ।
गलवे कसूर अरक्कात तारतम्येन निर्दिशेत् ॥ २० ॥

अर्थ—दोषोंके यथागति अनुसार नाडीकी बली और निर्बली जानना इनके- बली निर्बली आदि नाडियोंको गलवे कसूर और अरक्कातके तारतम्यसैं कहे॥२०॥

वाकियुल्वस्तनिर्दोषा स्वस्थस्य परिकीर्त्तिता ।
इति संक्षेपतो नाडीपरीक्षा कथिता बुधैः ॥ २१ ॥
विस्तरस्तु मया प्रोक्तो भाषायां जनहेतवे ।

अर्थ—स्वस्थ प्राणीकी निर्दोष नाडीको वाकियुल्वस्त कहतेहै यह मैंने संक्षेपसैं यूनानी मतानुसार नाडीपरीक्षा कहीहै इसका विस्तार मैंने भाषामें कहाहै ॥ २० ॥

यूनानीमतानुसार नाडी कोष्टकम्.

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०
गिजालि	मोजी	दूदी	मिन्शारी	जनबुल फार	नुमली	मतली	मतरकी	जुलफि-करत	वाकस फिल्वस्त
मृग शावक	तरंग	कृमि	आरा	मूंसेकी पूछ	मोरचैंटी	शलाई	हथोडा	शोकाक्रांत समान	विषम टं कोरदेना
मृगके बच्चेके समान जो नाडी उछलती कूदती चले उसको गिजाली कहतेहै यह पित्ताधिक्यसैं होतीहै ।	जो नाडी जलकी तरंगके समान गमनकरे उसको मोजी गति कहते है । यह तरीको सूचित करतीहै । अथवा देहकी निर्बलताको सूचित करेहै।	जो नाडी कीडाके समान मंद मंद गमनकरे वो कफ और आम दोषको सूचित करतीहै । इस नाडीकी गतिको दूदी कहतेहै ।	जैसे लकडीके ऊपर आरा चलता इसप्रकार खरदराट लिये जो नाडी ऊंगलियोंका स्पर्शकरे वो वाहर और भीतर सूजनको सूचित करतीहै । इस गतिको मिन्शारी गति कहतेहै ।	जो नाडी चूहेकी पूछसदृश गमन करे उसको जनबुल्फारगति कहतेहै । यह कफपित्तके कोपसैं होतीहै ।	जो नाडी चैंटी और मोरकी गतिके समान गमन करे उसको नुमली गति कहतेहै । ऐसी नाडी रोगीकी शीघ्र मृत्यु सूचना करतीहै ।	जो नाडी सलाईके समान दोनो प्रांतोंमें पतली और बीचमें मोटी होकर गमन करे उसको मतलीगति कहतेहै । यह निर्बलता सूचना करतीहै।	जो नाडी हथोडेके समान ऊंगलियोंको वारंवार चोट देवे उसको मतरकी गति कहतेहै । यह अत्यंत गरमीकी सूचना करतीहै ।	जो नाडी गमन करते करते ठहर जावे उसको जुल्फिकरगति कहते है। यह दिलकी कमजोरी सूचित करतीहै प्रायः यह शोक समय होतीहै।	जिस नाडीका टंकोरदेना जिस वक्तमें देनाउचितहै उस्से पूर्वही जास्ती टंकोर देदेवे यह श्वासाधिक्य निर्बलतामें होतीहै ।

यूनानी भाषामें नाडीको नब्ज कहनेका यह कारणहै कि नब्जका अर्थ शिराका तडफना है वह प्रत्येक मनुष्यकी प्रकृति, देश, काल, अवस्थाओंके भेदसैं समान नहीं होती, कुछ न कुछ भेद रहताही है वैद्य जिस स्वस्थमनुष्यकी नाडी

अनेकवार देखी होगी यदि फिर उसकी रोगावस्थामें देखेगा तो उसको उसकी नाडीका ज्ञान यथार्थ होगा, अन्यथा ज्ञान होना अति दुस्तर है ।

नाडीदेखने वालेको वा दिखाने वालेको उचित है कि किसीवस्तुका हाथको सहारा न देवे, न कोई वस्तु पकड रक्खीहो, तथारोगीके हाथमें पट्टीआदि बंधनादिक न होवे, यद्यपि वहुतसे वैद्य पहुचे, कनपटी, गुदा, टकने आदि अनेक स्थानकी नाडी देखते है, परंतु बहुधा हाथकी देखनेका यह कारणहै कि अन्यनाडी सब थोडी थोडी प्रगटहै शेष हाड मांसमें प्रवेश होनेके कारण अस्त होरही है उसजगे उंगलीयोंको स्पर्श प्रतीत नहीं होसकता परंतु हाथकी नाडी विशदहै अतएव इस-पर उंगली उत्तमरीतिसें धरी जाती है परंतु मुख्य कारण इसका यह है कि किसी स्त्रीकी नाडी देखनेकी आवश्यकता होवे तो वो अन्योन्य अङ्गोकी नाडी लज्जाके वस नहीं दिखा सकती, परंतु हाथके दिखानेमें किसिकोभी संकोच नहीं होता अतएव सर्वत्र हाथकी नाडी देखना प्रसिद्ध है ॥

अब कहतेहै कि यूनानी वैद्य नाडीकी गति दोप्रकारकी वर्णन करते है । प्रथम **इम्बिसात** दूसरी **इन्किवाज** ।

इम्बिसात (बाह्यगति)	**इन्किवाज** (अभ्यंतरगति)
इम्बिसात उसगतिको कहतेहैं जब नाडी वाहर आनकर ऊंगलीयोंका स्पर्श करती है ।	इन्किवाज उसगतिको कहतेहै कि जब नाडी ऊंगलियोंका स्पर्शकर भीतरको प्रवेश करतीहै ।

दोषः खिल्त इति प्रोक्तः स चतुर्धा निरूप्यते ।
सौदा सफरा तथा वल्गम् तुरीयं खून उच्यते ॥ २१ ॥

यूनानीमें दोष शब्दको **खिल्त** कहतेहै वह चार प्रकारकाहै जैसे **सौदा** (वात) **सफरा** (पित्त **वल्गम्** (कफ) और चौथा दोष **खून** (रुधिर) है परंतु अपने शास्त्रमें दूष्यहोनेसें इसको दोष नहीं माना यह शारीरकमें हम लिख आएहै ॥ २१ ॥

प्रत्येकदोषमें दोदोगुणहै यथा ।

तत्र सौदा धरातत्वं रूक्षं शीतं स्वभावतः । पित्तमग्नेः स्व-रूपन्तु सफरा रूक्षउष्णकम् ॥ २२ ॥ वल्गम्वारिस्वरूपं स्यात्सकफः स्निग्धशीतलः । अस्रं वायुः खून इति स्नि-ग्धोष्णं तेषु तद्वरम् ॥ २३ ॥

तहां सौदा अर्थात् वातमें पृथ्वीतत्त्व अधिकहै अतएव वातस्वभावसें ही रूक्ष और शीतलहै पित्तमें अग्नितत्त्व विशेषहै अतएव **सफरा** पित्त रूक्ष और उष्ण है **वल्गम** (कफ) में जलतत्त्व अधिक होनेसें स्निग्ध शीतल गुणवालाहै **खून** (रुधिर) में वायुतत्त्व अधिक होनेसें स्निग्ध और उष्णहै अतएव अन्य दोषोंकी अपेक्षा यह रुधिर श्रेष्ठ है।

इस प्रकार दोषोंके गुणोंका विचारकर उक्त नाडीके लक्षणोंसें मिलाकर द्वंद्वज गुण अपनी बुद्धिसें कल्पना करै ।

जैसै जो नाडी दीर्घ और स्थूलहो उसको गरमतर गुणविशिष्ट होनेसें रुधिरकी जाननी और जो नाडी दीर्घ तथा पतली होवे उसमें गरम और खुष्क गुण होनेसें पित्तकी जाननी जो ह्रस्व और मोटीहो वुह शरद और तर गुणवाली होनेसैं कफकी जाननी और जो नाडी ह्रस्व और पतली होवे उसमें शरद और खुष्क गुणहोनेसें वातकी नाडी जाननी चाहिये ।

इम्बसातके भेद ।

तवील (दीर्घाकार)			अरीज (स्थूलाकार)			उमक (वहिर्गत्याकार)		
मुअदिल समान ३	कसीर ह्रस्व २	तवील १ दीर्घ	अरीज स्थूल	ज्येयकवा जीक (कृष)	मुअदिल समान	मुशरिफ उमक वहिर्गत	मुनखफिज अंतर्गत	मुअदिल समान
यदि नाडी चार अंगुलसें कुछभी न्यूनाधिक नहो किंतु समहो तो उसप्राणीके शरदी गरमी समान जाननी ।	और चार अंगुलसैं न्यून होवे तो वो शरदीके लक्षण वाली जाननी अर्थात् ऐसे पुरुषके शरदी जानना ।	जो नाडी पहुचेसैं भुजाके प्रति चार अंगुलसैं अधिक लंबी प्रतीतहो तो वो गरमीके लक्षणवाली जाननी ।	यदि नाडी तर्जनी उंगलीसैं लेकर कनिष्ठिका पर्यंत स्थूल प्रतीत होवे तो वो तर अर्थात् जैसै रुधिर और कफमें ।	जो नाडी पतली प्रतीतहोवे उस्को रूक्ष अर्थात खुष्क कहतेहै । जैसै पित्त और वातकोपमे होतीहै ।	जो नाडी न स्थूलहो न कृशहोवे किंतु समानहो उसमे तरी ठीकठीक होतीहै ।	जो नाडी अत्यंत उछलकर बलपूर्वक उंगलियोंको स्पर्शकरे उसमें गरमीकी आधिक्यता प्रतीत होतीहै ।	जो नाडी हृदसैं कमउंची उठे अर्थात् धीरे उंगलियोंको स्पर्शकरे गरमी उसमें न्यूनता प्रतीत होतीहै । किंतु शरदीको द्योतन करतीहै ।	जो नाडी न वहुत उभरी हुईहो न वहुत बिलकुल दबी हुई हो किंतु समानहो इसमें गरमी होती है ।

अब जानना चाहिये कि हिकमतमें दोष चारप्रकारके कहे है यथा ।

अन्यचक्र

क्रम	विषय	हिन्दी	फारसी	विवरण
१	नाडीका बलावल	सबल	शीघ्रचारिणी	जो नाडी उंगलियोंके मांसमें जोरसैं धक्कादेवेकर ऊंची उठावे तो हृदयकी प्रबलता जाने।
		दुर्बल	मंदचारी	और यदि नाडी उंगलियोंको स्पर्शकर दबजावे तो हृदयकी दुर्बलता जाननी।
		मोतदिल	समता	और जो नाडी न बहुत जोरसे लगे न अत्यंत धीरे लगे वो दिलकी समताको प्रगट करतीहै।
२	नाडीका विलंबहोना	सरी	समता	जो नाडी शीघ्र आवा गमनकरे वो देहमें गरमीकी विशेषता द्योतन करतीहै।
		वती	मंदचारी	और धीरे धीरे आवा गमनकरे वो देहमें सरदीकी आधिक्यता द्योतन करतीहै।
		मोअदिल	शीघ्रचारी	जो नाडी मध्यम चालसैं आवा गमन करे वो सरदी गरमीकी समानता प्रगट करतीहै।
३	आकृति	मृदु	गरम	जो नाडी दाबनेसै सहज दबजावे उसको तरस्निग्ध कहतेहै, इसे फारसीमें लीन कहतेहै।
		कठिण	सख्क्त	और जो दवानेसैं न दवे वह खुश्क जाननी उसको फारसीमें सल्व कहतेहै।
		सम	मोअद्दिल	जिसमें मध्यम गुणहो अर्थात् न बहुत कठोर न बहुत नम्र वो मोतदिल जाननी।
४	प्रमाण	रुधिरपूर्ण	मुमतिला	जो नाडी मोटी और शीघ्र चलतीहो वह रुधिर और मवादसैं भरी हूई जानना अथवा जीवसैं परिपूर्ण जानना।
		स्वल्परुधिर	खाली	और जो नाडी खाली होतीहै वो मंद और पतली होतीहै उसमें थोडा रुधिर और मवाद जानना।
		समता	मोद्दिल	और जब नाडी न भरीहो न खालीहो वो समान कहलातीहै। इसमें मवाद ठीक होताहै।
५	स्पर्श	उष्ण	गरम	जिस समय नाडीका स्पर्श गरम प्रतीतहो तव रुधिरमें ज्वर वा गरमी जानना।
		शीत	सरद	और जिस समय स्पर्शमें शीतलता प्रतीतहो तव रुधिरमें सरदीकी आधिक्यता जाने।
		सम	मोअद्दिल	जिस समय नाडीमें शीत उष्णता समान प्रतीतहो उसको सम कहतेहै।
६	साध्यासाध्य	पूर्वसदृश	उस्तवा	जो नाडी कमसैं कम् ३५ वार टंकोर देके ठेहर जावे वो साध्यहै।
		विपरीत	इख्तिलाप	जो ३५ वार टंकोर देनेमें कई वार टूटजावे अर्थात् ठहर कर चले वो असाध्यहै।
		समता	मोअदिल	जो बहुतवार न टूटे किन्तु अल्पवार टूटकर फिर शीघ्र चलने लगे उसको याप्य जानना।
७	स्थिति	अत्यंत	मुतवातर	जो नाडी उंगलियोंको स्पर्शकरके शीघ्र नीचे चलीजावे वो निर्वल जाननी।
		धैर्य	मुतफावत	जो नाडी उंगलियोंको कुछकालतक स्पर्शकरे उसको वलवान् कहतेहै।
		समता	मोद्दिल	और जो समान रीतिसैं उंगलियोंका स्पर्शकरे उसको समान स्थिति वाली जाननी।

प्रत्येक प्रस्तारके नो नो भेद होतेहै लंवाव चौडावा और गहराई इन तीनोंके प्रमाणको हकीम लोग कुतर कहतेहै ।

उन दो तीन कुतरोंको एकत्र करो अर्थात् प्रस्तार करो तो दोप्रस्तार २७ सत्ताईस सत्ताईस के होतेहै जैसें आगेके दोनो चक्रोंमें लिखे है दोनो प्रस्तार करनेकी यह रीतिहै कि तीनप्रकारके लंवावको तीन प्रकारोंकी चौडाईके साथ गुणदेवे तो नो होवेगी इसीप्रकार लंवाई और गहराइयोंको तथा चौडाई और गहराईकी तीन तीन प्रकारोंके साथ मिलनेसैं नो नो भेद होतेहै इसप्रकार तीनो सत्ताईस सत्ताईस भेद होतेहै इसका उदाहरण आगे चक्रोसैं समझना चाहिये इस गुणनको फारसीवाले सनाई कहतेहै ।

नाडीनां प्रस्तारचक्रम् ।																	
सनाई (द्विगुण)									सलासी (त्रिगुण)								
द स	द क	द य	ह स	ह क	ह य	य स	य क	य य	द स व	द स अं	द स य	द क व	द क अं	द क य	द य व	द य अं	द य य
द व	द अं	द य	ह व	ह अं	ह य	य व	य अं	य य	ह स व	ह स अं	ह स य	ह क व	ह क अं	ह क य	ह य व	ह य अं	ह य य
स व	स अं	स य	क व	क अं	क य	य व	य अं	य य	य स व	य स अं	य स य	य क व	य क अं	य क य	य य व	य य अं	य य य

इन दोनो चक्रोंमें जो अक्षर है उनमें द सैं दीर्घ, ह सैं न्हस्व, और य सैं यथार्थ कहिये समान जानना उसीप्रकार स सैं स्थूल, क सैं कृश व सैं बहिर्गत अ सैं अंतरगतकी समस्या जानलेनी चाहिये ।

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे नाडीदर्पणे यूनानीमतानुसार नाडीपरीक्षणे तरङ्गः

PULSE EXAMIN.

अथैंग्लंडीयमतेन नाडीपरीक्षा

ऐंगलंडीयभाषायां नाडी पल्सेति शब्दिता । तस्याः परोक्षापरोक्षभेदेन द्विविधा गतिः ॥ १ ॥ द्रष्टुर्याङ्गुलिसंस्पर्शे

परोक्षा न करोति सा। करोति या साऽपरोक्षाङ्गुलिस्पर्शञ्च पश्यतः ॥ २ ॥

अर्थ—इंग्लंड अर्थात् अंगरेजीमें नाडीको पल्स Pulse कहतेहैं वह दो प्रकारकी है एक परोक्ष और दूसरी अपरोक्ष तहां जो नाडी देखनेवालेकी अंगुलियोंका स्पर्श न करे वह परोक्ष कहाती है और जो उंगलियोंका स्पर्श करे वो अपरोक्ष अर्थात् प्रत्यक्ष नाडी कहाती है।

उत्थानापेक्षया पुंस आसने तदपेक्षया । शयने नाडीका वेगो मन्दो भवति नानृतम् ॥ ३ ॥ सायंतनाह्नि समयात्प्रातःकालेऽधिका गतेः । वेगसंख्या भवेन्निद्राकाले ह्रासं च गच्छति ॥ ४ ॥

अर्थ—खडे होनेकी अपेक्षा (बनिसवत) बैठनमें और बैठनेकी अपेक्षा सोनेमें नाडीकी गति घटजातीहै । उसीप्रकार सायंकालकी अपेक्षा प्रातःकालमें नाडीकी गति बढजाती है। और निद्रामें नाडीकी संख्या घटजाती है ॥ ४ ॥

भोजनस्याथ समये वेगसंख्या विवर्द्धते । अहिफेनसुरादीनामुष्णानां यदि भोजनम् ॥ ५ ॥ बुभुक्षावसरे नाडी गतेर्वेगो ह्रसत्यलम् । एषा नाडी गतेर्वेगचर्या सामान्यतो मता ॥ ६ ॥

अर्थ—यदि अफीम मद्य आदि गरमवस्तु खायतो उस गरम भोजनके कारण नाडीकी संख्या बढजाती है, और अत्यंत शीतलवस्तु खानेसें नाडीकी संख्या न्यून होजाती है; यह अर्थाशसें जाना जाताहै। उसीप्रकार भोजनके समय नाडीका वेग मंद होजाताहै, यह नाडीकी सामान्य गति संख्या कही है।

नाडीकी व्यवस्था जाननेके लिये वैद्यको प्रथम इतनी वस्तुओंका जानना अति आवश्यकहै। जैसे प्रथम नाडी देखनेकी विधि दूसरे आरोग्यावस्थाकी नाडी तीसरे रोगावस्थाकी नाडी और चतुर्थ नाडी देखनेका यंत्र।

१ नाडीदेखनेकी विधि—नाडी देखनेके जो नियम वैद्योंने निश्चितकर रक्खेहै, यदि उनके अनुसार न देखी जावेतो हम जानतेहै कि नाडीका यथार्थज्ञान होना अति असंभवहै। अतएव अब उन नियमोंको वर्णन करतेहै।

प्रथम—वैद्य या रोगी कहींसें चलकर आयाहो तो उचितहै कि थोडीदेर विश्राम

लेकर फिर नाडी देखे या दिखावे, तथा परिश्रमकी अवस्थामें और शोधक विचारके समयभी नाडी न देखे ऐसे समयकी नाडी विश्वास योग्य नहीं है ।

दूसरे–रोगीको बिठलाकर या लिटाकर यदि कोई आवश्यकता होयतो खडा करके रेडिअल् आर्टेरी Radial Artery (जो पहुचेमें अंगूठेकी जडमें त्वचाके भीतरहै उसपर वरावर तीन उंगली रखकर नाडी देखना, परंतु कभी पहुचेकी देखना असंभव होयतो अन्योन्य स्थानकी देखे, जैसें मस्तक संबंधी रोगमें कनपटीकी नाडी तथा गठियामें पहुचेपर पटी बंधीहो अथवा दोनो हाथ कटगए हो तो प्रगंड (बाजू) की नाडी देखे, और कभी पैरमें टकनेके नीचे भीतरकी तरफ पोस्टीरिअर टीवीअल Posteriar Tibial नाडीको देखते है ।

तीसरे–वैद्यको रोगीके दोनों हाथोंकी नाडी देखनी चाहिये, इसका यह कारण है कि ऐसा देखा गयाहै, कि एक ओरकी नाडी दूसरी नाडीसें बडी होती है । और यहभी स्मरण रखना कि दहने हाथकी वामहाथसें और वामहाथकी देहनें हाथसें नाडी देखे इसमें सरलता रहती है ।

चतुर्थ–स्त्रीकी नाडी दहने हाथकी अपेक्षा वामहाथकी उत्तमरीतिसें विदित होती है इस्सें प्रतीत होताहै कि स्त्रियोंकी वाए हाथकी नाडी कुछ वडी होती है। हिंदुस्थानी वैद्य जो स्त्रीके वामकरकी नाडी देखतेहै कदाचित् उसका यही कारण न होय ।

पांचवे–नाडीकी स्पन्दन संख्या अर्थात् शीघ्रगति और मंदगति जाननेके पश्चात् उसके बलाबल जाननेको कुछ दवाकर फिर ढीली छोडदेवे, जिस्से यह प्रतीत होजावे कि नाडी दवानेसें कितनी दवती हे । परन्तु इतनी न दवावे कि जिस्सै रुधिरका भ्रमण वन्दहोजावे, केवल इतनी दावेकि जिस्सै नाडीकी तडफ प्रतीत होती रहे ।

छटे–धैर्यरहित पुरुषोंकी या अत्यंत डरपोककी नाडी देखैतो उनका ध्यान वार्त्तालापमें लगाय लेवे, इसका यह कारणहे कि ऐसे मनुष्योंकैं तुच्छकारणसें हृदयकी खटक न्यून होजाती है। अतएव नाडीका वृतान्त ठीक ठीक निश्चय नहीं होता ।

अव कहतेहै कि रुदन करनेसें और मचलनेसें वालकोंके पहुचेकी नाडीका देखना कठिनहे । इसवास्ते उनको गोदीमें बैठाल खिलौने आदिका लोभ देके उनके छातीपर कान लगाकर हृदयकी धडधडाटका निश्चय करना । यदि नाडीकाही देखना जरूरी होवेतो निद्रा अवस्थामें देखनी चाहिये ।

सातमे–नाडी देखनेके समय यहभी अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि नाडी-

पर किसी प्रकारका दवाव नही जैसे वंध, अथवा तंगी, या रसौली, वा घोटू आदिका सहारा नहोवे। क्षणिक और मानसिक रोगोंमें अनेकवार नाडी देखनी चाहिये कि जिस्सै रोग भलेप्रकार समझमें आयजावे।

आरोग्यावस्थाकी नाडी।

मध्यम श्रेणीके युवापुरुषोंकी नाडी आरोग्यावस्थामें साथ प्रबंधके कुछ दवने वाली और कुछ भरीहुई होती है। परंतु चिन्ह भेद और अवस्था तथा स्वभावादि भेदसें नाडीमें अंतर होजाताहै और वालिकाओंकी नाडी पुरुषोंकी अपेक्षा कुछ छोटी होतीहै और शीघ्रचारिणी होतीहै दंभी प्रकृतिवालोंकी नाडी भरीहुई, कठोर, और शीघ्रगामिनी होती है कोमलस्वभाववाले मनुष्योंकी नाडी धीरे धीरे चलेहै और नम्र होतीहै। वृद्धावस्थामें कठोर होतीहै।

नाडीकी स्पन्दनसंख्या (जिनका निश्चय करना नाडीकी और अवस्थाओंसे सुगमहै) सदैव हृत्पद्मके संकुचित खटकेके समान होती है। इस्सैं कदापि अधिक नहीं होती, परंतु अपस्मार आदि चित्तके रोग और मूर्च्छा आदिमें एक दो गति न्यून होजाती है।

छोटे वालककी नाडीकी गति अधिक होती है, फिर जैसें जैसें अवस्थाकी वृद्धि होतीहै उसी प्रकार क्रमसैं नाडीकी स्पन्दन संख्या न्यून होती जातीहै परंतु वृद्धावस्थामें फिर कुछ कुछ वढती है।

अवस्थानुसारनाडीकीगति	
गतिप्रमाण	अवस्था
१४०	सद्यःप्रसूत वालककी
१२० सें १३० तक	दूधपीनेवाले वालककी
१००	५ वर्षसें ६ वर्ष तकके वालककी
९०	१५ वर्षतकवाले नवयुवावस्थामें
७० सें ७५	३५ वर्षतक आर्थात् युवावस्थामें
७०	३५वर्षसें लेकर ५० वर्ष वालोंकी आर्थात् वृद्धावस्थामें
७५ सें ८० तक	अति वृद्धावस्थामें

इस चक्रमें जो नाडीकी संख्या है वह आरोग्यपुरुषके लिये ठीक है। परंतु रोगावस्थातें न्यूनाधिक होजातीहै। यदि नैरोग्यपुरुषकी नाडीकी गति १ मिंटमें ७२ वार हो और स्त्रीकी ८२ वार होय तो ठीक जाननी, स्त्रीकी १० गति पुरुषसैं सदैव अधिक होतीहै। और गर्मी-सूजन, ज्वर, अतिदुर्वलता, जागना, प्लेग, थोराके प्रथमदर्जासेलानूराधिर. क्रोध, जोश आदिमें ७० या अस्सीसें १०० या १२० वरंच २०० तक नाडीकी गति संख्या प्रत्येक मिंटमें हो जातीहै एवं सरदी अलस्य, निद्रा, कुछ थकावट,

क्षुधामें, हवाके दबावमें, बेफिकरीमें, इत्यादि कारणोंसें नाडीकी गति ऐसी न्यून होजाती है कि प्रत्येक मिंनटमें ६० या ३५ तकही रहजाती है ।

रोगावस्थाकी नाडी ।

रोगावस्थामें नाडीकी गति संस्था और अन्य अन्य लक्षणोंमें विशेष अंतर होताहै जैसे आगे लिखत है ।

ज्वर, प्रदर, वमन, विरेचन, बुहरान, इत्यादि रोगोंमें नाडी इतनी शीघ्र चलती है कि गणना करना कठिन होजाता है यदि ज्वरावस्थामें अकस्मात् नाडी मंदपडजावे तथा उसके साथ अन्य अशुभ लक्षणोंकी आधिक्यता होवे तो उसप्राणीके मस्तकमें किसीप्रकारके विघ्नसें सत्ता या पक्षघात होकर रोगीके मरनेका भय रहता है ।

गति संख्याके शिवाय नाडीमें जो वृत्तान्त निश्चय होताहै, उसको आगे कहते है ।

नाडीकीइंग्रेजीसंज्ञा ।

आनन्दादितरावस्था स्वानंदापेक्षया गतेः ।
वेगसंख्या वर्द्धते सा नाडीन्फ्रीकैंटशब्दिता ॥ १ ॥

अर्थ–आनंदकी अपेक्षा जिस नाडीकी संख्या अधिक वेगवान् हो उसको इंग्रेजीमें Freequent फ्रीक्केंट कहते है ।

आनन्दादितरावस्था स्वानंदापेक्षया गतेः ।
वेगसंख्या ह्रसति सा नाडीन्फ्रीकैंटशब्दिता ॥ २ ॥

अर्थ–जिस नाडीमें आनन्दकी अपेक्षा स्पन्दन संख्या न्यून होय उसमंद चारिणी नाडीको अंग्रेजीमें Infreequent इनफ्रीकेंट कहते है ।

चिरकालधृतायां च नाड्यां संख्या न वर्द्धते ।
न वा ह्रसति वेगस्य सा च रैग्यूलराभिधा ॥ ३ ॥

अर्थ–जिस नाडीपर बहुतदेरीतक हाथधरनेपरभी कुछ न्यूनाधिक्य प्रतीत न होय उस नाडीको इंग्रेजीमें Regular रेग्यूलर कहते है ।

चिरकालधृतायाञ्च नाड्यां संख्या विवर्द्धते ।
मन्दी भवति चावस्था सैरैग्यूलरशब्दिता ॥ ४ ॥

अर्थ–जो नाडी बहुतदेरी हाथरखनेसें कुछ न्यून्याधिक्य प्रतीत होय उस अवस्थाको डाक्टरलोग Irregular इरेग्यूलर कहते है ।

सकृदङ्गुलिसंस्पर्शादन्तर्धानन्तु गच्छति ।
इन्टरमिटेंटा भिधा साऽसृक्कफाशयदूषिणी ॥ ५ ॥

अर्थ-जो नाडी एकवार उँगलियोंका स्पर्शकर छिपजावे, वह रुधिर और कफाशयको दूषितकर्त्ता हृदयसंबंधी व्याधिको उत्पन्नकरे इसको इंग्लंडीयवैद्य Intermittent इन्टरमिटेंट कहते है ॥ ५ ॥

यदा रक्तेन पूर्णत्वमापन्ना नाडीका भवेत् ।
तदा फुल् शब्दविख्याताथवा लार्जेति विश्रुता ॥ ६ ॥

अर्थ-जिस समय नाडी रुधिरसें परिपूर्ण होती है उसको डाक्टरलोग फुल या Full Large लार्ज ऐसा कहते है ॥ ६ ॥

यस्यां हृत्कमलोच्छ्वासाद्रक्तमल्पं वहेत्तु सा ।
रिक्तानाडी स्माल संज्ञा समाख्याताङ्ग्लभाषया ॥ ७ ॥

अर्थ-जिस समय हृदयसें रुधिर अल्पप्रगटहोय उस रिक्तनाडीको पाश्चिमात्यवैद्य Egual इस्माल ऐसा कहतेहै ॥ ७ ॥

या वै गुणवदातन्वी नाडी क्षीणत्वशंसिनी ।
रक्ताऽल्पतां द्योतयन्ती सा थ्रेडीपल्ससंज्ञिता ॥ ८ ॥

अर्थ-जो नाडी डोरेके माफिक वहुतवारिक प्रतीत होय वह क्षीणता और रक्तकी अल्पताको प्रकाश करने वालीको Thready pulse थ्रेडीपल्स कहते है ॥ ८ ॥

अङ्गुलीभिर्यदा नाडी पीडितापि न नम्रताम् ।
व्रजेत्तदातिरूक्षत्वद्योतिनीहार्डशब्दिता ॥ ९ ॥

अर्थ-जो नाडी उँगलियोंके पीडनसैंभी अर्थात् दाबनेसैंभी नम्र न होवे वो रूक्षताकी द्योतनकरता नाडीको डाक्टरजन Hard हार्ड ऐसा कहते है ॥ ९ ॥

अङ्गुलीभिर्यदा नाडी पीडिता नम्रतां व्रजेत् ।
सार्द्रत्वद्योतिनी मृद्वी साफ्ट शब्देन शब्दिता ॥ १० ॥

अर्थ-जो नाडी उंगलियोंके दवानेसैं दवजावे उस मृदुनाडीको साफ्ट ऐसा कहते है यह आर्द्रत्वको द्योतन करती है ॥ १० ॥

प्रतिस्पन्दं शीघ्रतायां संख्या यस्या न वर्द्धते ।
सकृच्छैद्र्यधरा तूर्णगा नाडी क्वीक् शब्दिता ॥ ११ ॥

अर्थ–जिस नाडीमेंकी प्रत्येक तडफ शीघ्रभी होय परंतु स्पन्दन संख्या न बढे किंतु एकवारही जल्दीकरे उस तूर्णगामिनी नाडीको इंग्लेंडीय वैद्य Quick क्वीक् ऐसा कहते है यह निर्बलताको द्योतन करती है ॥ ११ ॥

यस्या मन्दगतिर्या च नाडी पूर्णा भवेत्तु सा ।
स्लोशब्दशब्दिता ज्ञेया रक्तकोपप्रकाशिनी ॥ १२ ॥

अर्थ–जो नाडी मंदगतिहो और परिपूर्णहो वह रुधिरकोपके प्रकाश करनेवाली नाडीको इंग्लैंडीय वैद्य Slow स्लो कहते है ॥ १२ ॥

खूनकी गतिके कारण नाडीके अनेक भेद है जैसैं आर्योटा Poorta Water Hamr वाटरहेमर Bounding बौंडिंग Lavaucring लेवरिंग Thriling Pulse थ्रिलिंग पल्स Readoudled रिडवल Dicrratores या डाईक्रोटस और इसीटेट-आदि है। जो लहरके समान उंगलियोंको लगकर हटजावे उसको जर्किंग अर्थात् झटकेदार नाडी कहते है । किवारोंकी रिगडके माफिक आर्योटा होती है। उछलनेवाली नाडीको बौंडिंग् कहते है, जो नाडी काँपती हो उसको थ्रिलिंगपल्स कहते है। इसीप्रकार अन्य सब नाडियोंकी गतिको बुद्धिवान् डाक्टरद्वारा और उनके ग्रंथोंसें जाननी इसजगे ग्रंथविस्तारके भयसें नहीं लिखी ।

नाडीदर्शक यंत्र ।

नाडी देखनेके लिये अंग्रेजी डाक्टरोंने एक यंत्र निर्माण करा है उसको अंग्रेजी बोलीमें स्फिग्मोग्राफ Sphygmograph कहते है इसमें अनेक टुकडे होते है विना दृष्टिगोचर हुये उनका समझना मुसकिल है इसलिये उस यंत्रकी तसवीर जो इस नाडीदर्पणग्रंथके पिछाडी हैं उससें समझना उसके आवश्यक विभागोंका कुछ इस जगे वर्णन करते है ।

अ–पटलीके चलाने और रोकनेका खूटी ।
क–तालील गानेकी कमानी ।
च–नाडीके कम्अधिक दवाव करनेका गोलाकार चक्रविशेष ।
ट–कज्जलसैं रंजित कागज धरनेकी जगह ।
त–चिन्हित होनेके पश्चात् जो कागज निकलता है ।
प–जिनसैं कागजपर चिन्ह होते है वो सूई ।

इस यंत्रके लगानेकी यह विधि है कि जब हांतीदांतवाले स्थानको रेडियल्पर धरकर यंत्रको काममें लाते है तो नाडीकी तडफ कमानीको लगती है जिसके द्वारा सूईसैं कागजपर लहरदार रेखा प्रकट होती है । कि जिनसैं हृदयके धडनेका

अथ डाक्टरीमतानुसार नाडीचक्रम्

संख्या	इंग्रेजी नाम	इंग्रेजीअक्ष०ना०ना०	संस्कृतनाम	नाडीयोंकी व्यवस्था
१	फ्रिक्रेंट	Friquent	शीघ्रचारिणी	हृदयके खटकाके संख्यानुसारनाडी दोप्रकारकीहै पहली फ्रीकेंट इसमें आरोग्य अवस्थाकी अपेक्षा गति संख्या अधिकहोतीहै।
२	इन्‌फ्रिक्रेंट	Infriquent	मंदगामिनी	दूसरी इन्‌फ्रीकेंट इसकी दशा फ्रीकेंटसैं विपरीत होतीहै यह स्त्रीयोंके वातगुल्म रोगमें होतीहै।
३	रेग्यूलर्स	Regulars	सावधानता सूचक	हृदयकी गतिके प्रबंधानुसारभी नाडीकी दो अवस्था पाई जातीहै एक रेग्यूलर, नाडीनूमें क्रमानुसार रुधिर जानेवाली नाडीको रेग्यूलर कहतेहै इसपर हाथ रखनेसैं गति एकसी मालूमहो और कभी बीचमें अंतर नहीं पडता।
४	इररेग्यूलर्स	Irregulars	असावधानता सूचक	दूसरी इररेग्यूलर अर्थात् नाडीनूमें क्रमके विपरीत रुधिर जाय इसपर हाथ रखनेसैं गति एकसी प्रतीत नहीं होती और बीचमें अंतर पड जाताहै रोगावस्थामें नाडीका सप्रबंधित अर्थात् क्रमपूर्वक चलना अच्छाहै।
५	इंटरमिटेंट	Intermittent	सांतरिक	जिस नाडीके तडफ होनेमें जितना काल जाताहै उससै अधिक होजाय अर्थात् दूसरी गति काभी कालव्यतीत होजावे उसको इंटरमिटेंट कहतेहै परंतु गतिके भेदसे यह दोप्रकारकीहै एक रिग्यूलर इन्टर्मिटेंट और दूसरी इररेग्यूलर इन्टर्मिटेंट है।
६	फूलया लार्ज	Full या Large	परिपूर्ण	मस्तकके सूजनेमें अन्यकारणोंसैं नाडीमें अधिक रुधिर पहुचें और उंगलियोंके नीचे नाडीका उत्प्लवन अधिक प्रतीतहो तो उसनाडीको फुल या लार्ज कहतेहै यह अधिक रुधिर वृद्धिमें अथवा कठोररोगों प्रतीत होतीहै।
७	इस्माल	Esmal	रिक्त	जो नाडी फुल लार्जके विपरीतहो अर्थात् नाडीमें अल्प रुधिर पहुचे और नाडीका उत्प्लवन उंगलियोंको थोडा प्रतीतहो उसनाडीको स्माल अर्थात् बारीक नाडी कहतेहै।
८	थ्रेडीपल्स	Thready Pulse	सूक्ष्मतर	जब नाडी अत्यंत सूक्ष्ममूतके समानहो तो उसको इंग्रेजीमें थ्रेडीपल्स कहतेहै यह रुधिरकी न्यूनावस्था अथवा दुर्बलतामें देखी जातीहै।
९	हार्ड	Hard	कठिन	नाडीकी दिवारकी लचकके तुल्यनाडीकी दोगति होतीहै एक हार्ड अर्थात् कठोर इसैं किंचिन्मात्रभीं दबानेसैं उंगलियोंको कठोरता प्रतीत होतीहै यह नाडीकी अधिक लचकके कारण होतीहै।
१०	साफ्ट	Soft	मृदु	द्वितीय साफ्ट या नम्र जिसकी दशा हार्ड नाडीके विपरीत होतीहै यह नाडीके अनुरोध (नाडीकी दिवार) की लचकसैं और देहके निर्बलतामें पाई जातीहै।
११	क्वीक्	quick	शीघ्रगामिनी	नाडीकी गतिमें जो समय व्यतीत होताहै उसके अनुसार नाडी द्विविध होतीहै एक क्वीक् अर्थात् शीघ्रचारणी नाडीकी प्रत्येक गति शीघ्र शीघ्रहो परंतु एक अथवा मानासिक रोगोंमें जिनमें स्वभाव दुष्टहो उनमें पाईजातीहै।
१२	स्लो	Slow	धीरगामिनी	जो क्वीक् नाडीके विपरीतहो अर्थात् सुस्तहो उसको स्लो नाडी कहतेहै।

हाल और रुधिरभ्रमणका वृत्तान्त उत्तमरीतीसें प्रतीत होता है । प्रत्येक लहरमें एक रेखा उठनेकी होती है फिर मुडनेकी और फिर उतरनेकी तथा उतरनेकी लहरमें दो लहर प्रगट होती है इन लहरोंकाभी चिन्ह स्फिग्मोग्राफ यंत्रमें लिखा है सो देखलेना ।

खडीरेखा हृदयके संकोच होनेसें होती है और मुरडनेका कोना नाडियोंके किसीप्रकार संकोचसें होताहै और जिससमय हृदयके संकोचसें रुधिर अयार्टामें पहुँचताहै तो पहली रेखा प्रगट होती है फिर अयार्टाके किवाड बंदहोनेसें दूसरी लहर खांचितक बनती है अयार्टाके सुकडनेके पीछे रुधिर आगेको बढजाताहै और दूसरी लहर परिपूर्ण होकर एकवार हृदयके खटकेकी चिन्हतरेखा संपूर्ण होजाती है ।

इति नाडीदर्पणे ऐंग्लैंडीयनाडीपरीक्षावर्णनं नाम पञ्चमावलोकः ।

इति श्रीमाथुर कृष्णलालपुत्रदत्तरामेण सङ्कलिते आयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरान्तर्गते नाडीदर्पणे ऐंग्लैंडीयनाडीपरीक्षावर्णनं नाम पञ्चमावलोकश्चाष्टत्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३८ ॥

समाप्तोयंनाडीदर्पणाख्यो ग्रन्थः ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—
गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास
"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना
कल्याण—मुंबई.

लक्ष्मीवेङ्कटेश्वरायनमः।

कोकिलाव्रतमाहात्म्यस्य

सूचनापत्रम्।

इह तावद्ब्रह्माण्डान्तर्वर्तिनवखण्डभूमण्डलशिखण्डीभूतकर्मकाण्डस्थलभरतखण्डे स्ववर्णाश्रमधर्माचरणश्रद्धावतां जनानाम् इहामुत्रेष्टफलावाप्तिसाधनानि नित्यनैमित्तिककाम्यानि नानाव्रतकर्मादीनि प्रसिद्धानि सन्ति। तथैव तत्तद्व्रतादिविधिप्रतिपादकव्रतार्कव्रतराजादयोपि ग्रन्थाः प्रसिद्धः। तेषु स्त्रीणां जन्मनि जन्मान्तरेच सौभाग्यादि प्रिययोगभोगदं कोकिलानामकं व्रतं तद्देवतार्चनोद्यापनादिविधिस्तदितिहासश्च कथितोस्ति खलु। तथापि स संक्षिप्त एव। अतो मया बहुप्रयत्नतः कस्यचित् विद्वद्विप्रस्य सकाशात् स्कन्दपुराणान्तर्गतकनकाद्रिखण्डस्थैकत्रिंशदध्यायात्मकं शिवनारदसंवादरूपं साद्यन्तं मनोरमं कोकिलाव्रतोत्पत्तिहेतुभूतं दग्धदेहपार्वत्याःकोकिलाजन्मप्राप्तिकथोपबृंहितं कोकिलामाहात्म्यं समाहृत्य शास्त्रिभिः शोधयित्वा सटिप्पणम् कारयित्वा च अस्मल्लक्ष्मीवेङ्कटेश्वराख्येङ्कनयन्त्रे सललितसीसकाक्षरैर्मुद्रितमस्ति। यस्मिन् वर्षेधिकाषाढस्तस्मिन्नेव वर्षे शुद्धाषाढपूर्णिमामारभ्य मासपर्यन्तं प्रत्यहं स्नानदानार्चनमाहात्म्यश्रवणविधियुक्तकोकिलाव्रताचरणं स्त्रीभिःकार्यमित्युक्तम्। स व्रताचरणकालोऽस्मिन्नेव वर्षेऽधिकाषाढप्राप्तेरागन्तेति संप्रत्येवैतन्माहात्म्योपयोगः सर्वासां व्रताचरणशीलानांसम्यग् भविष्यतीति ज्ञात्वा झटिति संमुद्र्य प्रकाशितम्। तस्मात् तन्मुद्रणायासम् आस्तिकग्राहकाः सफलीकुर्वन्त्विति सविनयेयंमत्प्रार्थना! ग्राहकाणां माहात्म्यपुस्तकानि योग्यमूल्येन मिलिष्यन्तीत्यलं विस्तरेण।

तनिश्लोक्याख्यया भूषणाख्यया रामानुजी याख्यया च व्याख्यया समेतस्य श्रीवाल्मीकिरामायणस्य

प्रसिद्धिपत्रिका ।

भो भो विद्यापारावारपारीणा इदं विदाङ्कुर्वन्त्वत्रभवन्तः—तनिश्लोक्याख्यया भूषणाख्यया रामानुजीयाख्यया च व्याख्यया समेतं श्रीवाल्मीकिरामायणम् अत्युत्तमतैलङ्गदेशीयपुस्तकमालोच्य पण्डितैः संशोधितं, तच्च सम्प्रति सुव्यक्तैः स्थूलसूक्ष्माक्षरैर्लक्ष्मीवेङ्कटेश्वरमुद्रणयन्त्रे मुद्यते, तस्य च नागेशप्रभृतिविनिर्मिताः सन्ति यद्यपि बह्व्यो व्याख्याः, तथापि सहृदयहृदयाह्लादकनानाविधाऽपूर्वार्थान्वेषणे प्रयतमानैरार्यकुलोचितधर्ममर्यादाविचारशीलैर्महाशयैर्निर्विशेषत्वेन सविशेषत्वेन च ब्रह्मस्वरूपप्रतिपादकवेदान्तवाक्यानां समीचीनतर्कसहकृतविषयभेदव्यवस्थापनेन तात्पर्यार्थनिर्णायकतया श्रीवाल्मीक्यभिप्रायानुगा रामानुजीयव्याख्यातनिश्लोकीव्याख्यासमेता भूषणाख्यव्याख्याऽवश्यं निरीक्षणीयेति, मन्येऽहं निरीक्षणेनाभिज्ञानामवश्यं जिघृक्षा भवेदिति ।

व्याख्याद्वयोपेतस्य भगवद्गुणदर्पणाख्यस्य श्रीविष्णुसहस्रनामभाष्यस्य

प्रसिद्धिपत्रिका ।

अनुष्टुप्श्लोकात्मकनिरुक्त्याख्यव्याख्यासमेतं, नामनिर्वचनोपयोगिप्रकृतिप्रत्ययप्रदर्शकनिखिलतन्त्रप्रधानीभूतपाणिनीयस्मृतिसूत्रगर्भितनिर्वचनाख्याद्वितीयव्याख्यासमेतं च, सहृदयहृदयाह्लादकं श्रीभगवद्गुणदर्पणाख्यं श्रीविष्णुसहस्रनामभाष्यमासीत्तैलङ्गदेशाक्षरैर्द्राविडदेशाक्षरैश्च मुद्रितम्, तच्चास्मदीयदेशेऽतीवदुर्लभतरमिति मनसि निधाय सकलजनोपकृतयेऽतिप्रयासेन तच्च तैलङ्गदेशादिह्यानाय्य देवाक्षरैर्लेखयित्वा मुहुर्मुहुरभिज्ञजनद्वारा संशोध्य च, स्थूलसूक्ष्माक्षरैर्मनोहरं मुद्र्यते, येषां महाशयानां स्याज्जिघृक्षा, तैर्द्रुततरम् सूचना कार्या, यतस्तत्पुस्तकप्रेषणेऽहमुद्यतोभवेयमिति मे विज्ञप्तिः

श्रीकृष्णदासात्मजो गंगाविष्णुः

"लक्ष्मीवेंकटेश्वर" मुद्रणयन्त्रम् कल्याण–(मुंबई)